www.thearyasamaj.org

नूतन निष्काम पत्रिका

नूतन निष्काम पत्रिका ❑ वर्ष-४ ❑ अंक-१० ❑ मुम्बई ❑ अक्तूबर- २०१३ ❑ मूल्य-रु.९/-

दीपावली की हार्दिक शुभकामनायें

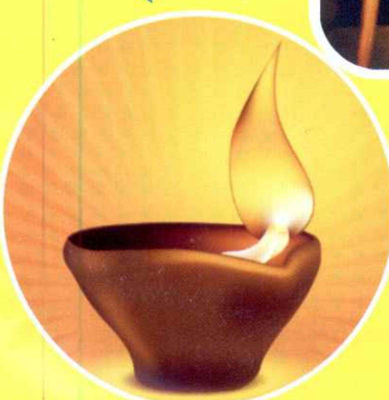

महर्षि दयानन्द सरस्वती

www.thearyasamaj.org

आर्य समाज सान्ताक्रुज़ में वेद प्रचार समारोह सम्पन्न

आर्य समाज सान्ताक्रुज़ (प.) मुम्बई द्वारा गुरुवार दि. १९ सितम्बर से रविवार दि. २२ सितम्बर, २०१३ तक आर्य समाज सान्ताकुज़ के बृहद सभागार में वेद प्रचार समारोह उत्साहपूर्वक मनाया गया। इस अवसर पर प्रतिदिन सायं ६.३० से ९.३० बजे तक ''चतुर्वेद शतक पारायण यज्ञ'' तथा भजन, प्रवचन का आयोजन किया गया। यज्ञ के ब्रह्मा प्रो. विनय विद्यालंकार जी (उत्तराखण्ड) तथा विशेष वक्ता के रूप में सुप्रसिद्ध वैदिक विद्वान प्रो. विनय विद्यालंकार जी (उत्तराखण्ड) थे । यज्ञ में वेदपाठी ब्राह्मचारी- गुरुकुल वैदिक संस्कृत महाविद्यालय रामलिंग- येडशि तथा ब्राह्मणवृन्द पं. नामदेव आर्य, पं. विनोद कुमार शास्त्री, पं. नरेन्द्र शास्त्री एवं पं. प्रभारंजन पाठक थे।

इसी क्रम में रविवार दि. २२ सितम्बर, २०१३ को चार दिवसीय चतुर्वेद शतक पारायण यज्ञ की पूर्णाहुति प्रात: ९.३० बजे हुई। प्रात:राश के पश्चात् १०.२० बजे से कार्यक्रम का शुभारम्भ हुआ। तदनन्तर सुप्रसिद्ध भजनोपदेशक श्री प्रभाकर शर्मा एवं कुमार योगेश आर्य ने प्रभु भक्ति एवं स्वामी दयानन्द पर आधारित सुन्दर गीत प्रस्तुत किये। प्रो. विनय विद्यालंकार जी ने वेद मंत्रों की सुंदर व्याख्या करते हुए तर्कों प्रमाणों तथ्यों उदाहरणों से श्रोताओं को लाभान्वित किया। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने वेद का प्रचार प्रसार किया था तथा आर्य समाज की स्थापना भी इसी उद्‌देश्य से की थी अत: हम सबको वेदों का सार्वजनिक प्रचार प्रसार करना होगा। ईश्वर एक है उसी एक शुद्धतम ईश्वर की उपासना करके ही लोग कष्टों से मुक्त हो सकेंगे। आप के वैदिक सिद्धान्तों से ओत-प्रोत सारगर्भित, प्रेरणादायक प्रवचन हुए। इस अवसर पर उत्तराखण्ड में आयी प्राकृतिक आपदा के सहायतार्थ अब तक एकत्र किये गये रु. तीन लाख का चैक उत्तराखण्ड आर्य प्रतिनिधि सभा के नाम दिया गया ।

आर्य समाज सान्ताक्रुज़ के प्रधान श्री चन्द्रगुप्त आर्य तथा श्री लालचन्द आर्य ने आमंत्रित अतिथिओं का माल्यार्पण कर अभिनन्दन किया। प्रधान जी ने सभी उपस्थित विद्वानों, अतिथियों, श्रोताओं एवं कार्यकर्ताओं तथा सहयोगियों एवं दानदाताओं का हार्दिक आभार व्यक्त करते हुए धन्यवाद दिया । महामन्त्री श्री संगीत आर्य ने सम्पूर्ण कार्यक्रम का संचालन किया। शान्तिपाठ एवं जयघोष के साथ कार्यक्रम सम्पन्न हुआ । तत्पश्चात सभी ने प्रीति भोज का आनन्द लिया ।

वैदिक मिशन मुम्बई द्वारा शिक्षक दिवस पर भाषण प्रतियोगिता सम्पन्न

पिपलियामंडी। पूर्व राष्ट्रपति डा. राधाकृष्णन के जन्म दिवस शिक्षक दिवस पर, वैदिक मिशन मुम्बई के द्वारा नेनोरा आर्य समाज के तत्वावधान में भाषण प्रतियोगिता रखी गई इस अवसर पर शिक्षकों का सम्मान भी किया गया ।

पूर्व सरपंच अशोक आर्य के मुख्य आतिथ्य में आयोजित उक्त कार्यक्रम में कुल-३२ छात्र-छात्राओं ने भाग लिया । जिसमें कक्षा ६ से ८वीं तक के छात्र छात्राओं में मुस्कान घनश्याम सेमली ने प्रथम् स्थान पाकर मिशन की ओर से ५०० रु., द्वितीय मनोज आर्य बाल मंदिर बुढ़ा को ३०० रुपये तथा तीसरा स्थान कु. अंजली सेमली ने पाया और उसे भी २०० रुपये दिये गए।

इसी तरह वरिष्ठ वर्ग कक्षा ९ से १२वीं तक में प्रथम् विजेता कु. श्वेता जोशी दयानंद कोचिंग को ५०० रुपये, द्वितिय हरीश दुबे, सेमली को ३०० रुपये तथा तीसरे स्थान पर कु. ऋतम्भरा पाटीदार बुढ़ा को २०० रुपये दिए गये । सभी विजेताओं को दी गई पारितोशिक राशी के साथ ही अतिथियों के कर कमलों द्वारा प्रमाण पत्र भी दिए गये।

इस मौके पर कार्यक्रम के मुख्य वक्ता तथा उक्त मिशन के अध्यक्ष डा. सोमदेव शास्त्री द्वारा आमंत्रित शिक्षकों का शाल श्रीफल से सम्मान किया गया व प्रतियोगिता में भाग लेने वाले सभी छात्र छात्राओं को सम्मान राशि व प्रमाण पत्र देकर उनका उत्साह बढ़ाया। कार्यक्रम में श्री कृपाशंकर आर्य, श्री गंगाधर आर्य, प्रधान मंदसौर श्री अरविंद आर्य छोटी सादड़ी प्रधान श्री रतनसिंह शक्तावत, प्रधान श्री कन्हैयालाल कारपेंटर, श्री सत्येन्द्र आर्य, आदी विशेष अतिथि मंचासीन थे ।

प्रतियोगिता के निर्णायक थे प्राचार्य श्री धीसालाल चौहान, शिक्षाविद श्री शिवनारायण पाटीदार तथा डा. मनिवास पाटीदार। इससे पूर्व पुष्पहारों से अतिथियों का स्वागत किया गया। स्वागत भाषण मंत्री रामेश्वर आर्य ने किया। कार्यक्रम में आसपास के स्कूलों से शिक्षकगण व बड़ी संख्या में छात्र छात्राएं तथा गणमान्य व्यक्ति उपस्थित थे। संचालन दयानंद पाटीदार ने किया । आभार डा. शास्त्री ने माना ।

संदीप आर्य
मन्त्री- वैदिक मिशन मुंबई.

www.thearyasamaj.org

आर्य समाज सांताक्रुज, मुम्बई का मासिक मुखपत्र
वर्ष : ४ अंक १० (अक्तूबर-२०१३)

- दयानंदाब्द : १९०, विक्रम सम्वत् : २०७०
- सृष्टि सम्वत् : १,९६,०८,५३,११४

प्रबन्ध संपादक : **चन्द्रगुप्त आर्य**
संपादक : **संगीत आर्य**
सह संपादक : **संदीप आर्य**
कार्यकारी संपादक : **विनोद कुमार शास्त्री**
लालचन्द आर्य, रमेश सिंह आर्य, यशबाला गुप्ता.

विज्ञापन की दरें : शुल्क

- पूरा पृष्ठ : रु. ३,०००/- • एक प्रति : रु. ९/-
- १/२ पृष्ठ : रु. २,०००/- • वार्षिक : रु. १००/-
- १/४ पृष्ठ : रु. १,५००/- • आजीवन : रु. १०००/-
- विशेषांक की दरें भिन्न होंगी।

वर्गीकृत विज्ञापन
रु. १०/- प्रति शब्द, न्यूनतम रु. ५००/-
चैक /डीडी / मनी आर्डर आदि 'आर्य समाज सान्ताक्रुज' के नाम से ही भेजें, मुंबई के बाहर के चैक न भेजे। विज्ञापन सामग्री १० तारीख तक भेजें। 'नूतन निष्काम पत्रिका' का मुद्रण ऑफसेट विधि से होता है।

पत्ता : आर्य समाज सांताक्रुज़
(विठ्ठलभाई पटेल मार्ग) लिंकिंग रोड, सांताक्रुज़ (प.), मुंबई -५४ फोन : २६६० २८००, २६०० २०७५

अनुक्रमणिका	पृष्ठ सं.
समाचार	२
सम्पादकीय	३
वैदिकधर्म का विस्तार कीजिये	४
ब्रह्मविचरणी विश्व वारा	५
मनुर्भव	६-७
भारत के उज्ज्वल इतिहास में	८-९
''यज्ञ की प्रमाणिकता'' / सकारात्मक सोच....	१०-११
पं. राजाराम शास्त्री	१२
गोमूत्र-महौषध	१३
समाचार	१४
युग निर्माता महर्षि दयानन्द सरस्वती	१५-१६

सम्पादकीय

आर्य समाज बनाम वर्ण

महर्षि दयानन्द से पूर्व आर्यावर्त देश के वैदिक धर्मी अपने पतन के कारण जन्मगत् वर्ण में बंटे हुए थे। महर्षि दयानन्द ने आर्ष ग्रन्थों को प्रमाण मानते हुए सत्य-सनातन वैदिक मान्यताओं को पुन: स्थापित किया। वर्ण व्यवस्था जन्मगत् न होकर कर्म से है, वैदिक व्यवस्था पुनर्जीवित की जन्म के पश्चात् सभी बालक/बालिकायें आचार्य के पास शिक्षा ग्रहण करने जाते थे। आचार्य उनकी योग्यता निर्धारित कर उन्हें ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि वर्ण देता था। कालांतर में यही वर्ण अपने अपने परिवारों से आसक्ति के परिणाम स्वरूप संकुचित होते गये। इस तरह जन्मगत् अवैदिक वर्ण-व्यवस्था पनपती गयी। वर्णगत् भेदभाव बढ़ता चला गया। इसी दुष्परिणाम के कारण एक विशेष वर्ण के लोगों को तिरस्कृत किया गया, अपमानित किया गया, अछूत तक समझ लिया गया। यही वर्ग कालान्तर में धर्मान्तरण करके अपने अस्तित्व के लिये संघर्ष करने लगा और इस तरह हमारी कुरीतियों त्रुटियों के कारण ही दूसरे सम्प्रदायों की तरफ चला गया। अस्तु!

महर्षि दयानन्द द्वारा शुरू की गयी क्रान्ति के फलस्वरूप उनसे प्रभावित आर्यों ने अपने नाम के साथ वर्ण बोधक नाम हटाकर आर्य लगाना आरम्भ कर दिया। गुरूकुलों में सभी तथाकथित वर्णों के बच्चे एक साथ पढ़ने लगे। लेकिन दुखद पहलू यह रहा कि आर्य समाज की क्रान्ति के साथ-साथ कुरीतियां भी पनपती रहीं। परिणामस्वरूप गुरूकुल का ब्रह्मचारी जब बाहर निकलकर अपने को स्थापित करने लगा तो सामाजिक कुरीतियों के कारण उसके जन्मगत् वर्ण ने उसका पीछा नहीं छोड़ा स्वयं उसने भी आरक्षण के लाभ के लिये अपने जन्मगत् वर्ण को प्रमाणित किया। एक तरफ आर्य समाज की क्रान्ति फैलना चाह रही थी, किन्तु व्यवहारिक पक्ष में कमजोर होती जा रही थी। महर्षि के सिद्धान्तों को मंच से प्रचारित करने वाले व्यवहार में अपने अपने जन्मगत् वर्ण का गुट बनाने लगे। आज ऐसा मालूम पड़ रहा है कि हमने मुखौटा तो आर्य समाजी का पहन रखा है किन्तु वास्तव में हम तथाकथित जन्मगत् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आदि में बंटते जा रहे हैं।

एक समय था जब शहीद भगतसिंह आर्य समाजी कहलाता था, लाला लाजपतराय आर्य समाजी कहलाते थे, आज जन्मगत् वर्ण-व्यवस्था की कुरीतियों के परिणामस्वरूप शहीत भगतसिंह और लाला लाजपतराय आज अपने जन्मगत् वर्ण के रूप में पहचाने जाने लगे। आर्य समाज की क्रान्ति इन कुरीतियों के आगे फीकी पड़ती दिखायी दे रही है। आज हमें आर्य समाज के अन्दर इस वृत्ति के लोगों को पुन: महर्षि के सिद्धान्तों का पाठ पढ़ाना होगा। वरना वह दिन दूर नही जब यह ब्राह्मणों का आर्य समाज है, यह क्षत्रियों/ठाकुरों का आर्य समाज है, यह वैश्यों का आर्य समाज है इत्यादि रूप में हमारी पहचान रह जायेगी और वह दिन महर्षि के तथाकथित अनुयायियों द्वारा ही महर्षि के सिद्धान्तों की हत्या का दिन कहलायेगा।

- संगीत आर्य
9323573892

www.thearyasamaj.org

वैदिक धर्म का विस्तार कीजिये

देश-देशान्तरों एवं द्वीप-द्वीपान्तरों सत्य सनातन वैदिकधर्म का विस्तार करने हेतु महर्षि दयानन्द द्वारा स्थापित आर्यसमाज की ओर से होते आ रहे अब तक के प्रचार कार्य का हमारी दृष्टि में कोई विशेष उत्साहवर्धक परिणाम सामने नहीं आया। अर्थात् सम्पूर्ण विश्व को आर्य बनाने में संलग्न आर्यसमाज अपने पूर्ण परिश्रम-त्याग-बलिदान के पश्चात् भी अब तक विशुद्धरूप से किसी एक बस्ती तक को आर्य नहीं बना पाया। इससे प्रमाणित होता है- कहीं भूल अवश्य हुई और हो रही है, जिसका कि शीघ्र ही सुधार होना चाहिये।

मत-पन्थों के जाल में जकड़े मानव समुदाय को मुक्त करना आर्यजनों का नैतिक दायित्व है, यह मानकर सम्बन्धित प्रत्येक व्यक्ति को पूर्ण सावधानी तथा समझदारी के साथ विशेष पुरुषार्थ करना है। इसके लिये हम अपने अनुभवों पर आधारित (वैदिक धर्म विस्तार में अत्यन्त सहायक) कुछ उपयोगी विचार प्रस्तूत कर रहे हैं, यह विश्वास लेकर कि हमारे आर्यबन्धु इस और अवश्य ध्यान देंगे।

प्रेम से समझाओ - भड़काओ मत

अनेक स्थानों पर आर्यप्रेमी-वार्षिकोत्सव तथा वेद प्रचार सप्ताह आदि के माध्यम से अपने नगर/ग्रामसावियों को आर्य विद्वानों द्वारा सत्य सनातन वैदिकधर्म सम्बन्धी जानकारी दिलवाना चाहते हैं किन्तु हम देखते हैं- उनके परिश्रम का कोई विशेष लाभ नहीं होता। अर्थात् आयोजित कार्यक्रमों में भाग लेने वाले श्रोता वैदिकधर्मी नहीं बन पाते। इसका मुख्य कारण है- सन्तुलित एवं प्रभावी (हृदयग्राही) भाषा में वैदिक विचार व्यक्त करने का अभाव।

हमारे विचार से धर्मप्रचार का स्तर गिरा और गिरता जा रहा है। आज अनेक भजनीक फिल्मी धुनों पर आधारित तुकबन्दियाँ और चुटकले सुनाकर श्रोताओं का मात्र मन बहलाते तथा वक्ता भड़काने वाले भाषण देते हैं।

अन्य मतावलम्बी कथा-उपदेश आदि के अवसर पर अपने मान्य सिद्धान्तों का वर्णन करते हैं, वे कभी आर्यसमाज अथवा भिन्न विचारधार वालों का नाम तक नहीं लेते, परन्तु हमारे यहाँ पुराण, बाईबल, कुरान आदि में वेद विरुद्ध क्या लिखा है, यह अवश्य बताया जाता है (भले ही कुछ वक्ताओं ने उक्त ग्रन्थों के दर्शन भी न किये हों) एवं इनसे सम्बन्धित व्यक्तियों के दोषों का उल्लेख करने में अपने प्रवचन की सार्थकता समझते हैं (चाहे इसका कोई लाभ न हो)

हम जानना चाहते हैं- क्या हमारे विद्वान् अपने उपदेशों में वेद, उपनिषदों, दर्शनों, स्मृतियों, रामायण, महाभारत आदि का आधार लेकर कल्याणकारी वैदिक मान्यताओं का प्रतिपादन नहीं कर सकते? क्या वेद विरुद्ध मतों की आलोचना किये बिना किसी को वैदिक धर्मानुयायी नहीं बनाया जा सकता?

हमारे देखते-देखते ब्रह्माकुमारी, गायत्रीपरिवार आदि अनेक मतों का विस्तार हो गया और हो रहा है, किन्तु हम जहाँ के तहाँ हैं- प्रगति तो दूर, हमारी गति मन्द होती जा रही है। क्या आपको इस अवस्था पर सन्तोष है? नहीं तो फिर अपने द्वारा किये जा रहे कार्य तथा प्रचार की शैली में परिवर्तन अवश्य कीजिये, यह हमारी आपसे विनम्र प्रार्थना है। आर्यसमाज के प्रति अनेक क्षेत्रों में जो धारणा बनी हुई है उसका अनुभूत उदाहरण हम प्रस्तुत कर रहे हैं-

हमें प्रचारार्थ आमन्त्रित करने वाले कई आर्यजन कहते हैं कि 'आप हमारे यहाँ प्रवचन करते समय आर्यसमाज का नाम न लेवें, अन्यथा श्रोताओं की उपस्थित नहीं हो पायेगी। हमने रामायण की कथा के नाम से प्रचार आयोजन रखा है, अतः आप श्रीराम गुणगान के साथ ही वैदिक मान्यताओं का प्रतिपादन कीजिये। इससे प्रमाणित होता है हमने आर्यसमाज के प्रति सर्वसाधारण को समझाया नहीं- भड़काया है।

आश्चर्य तो यह है कि जो सरेआम असत्य, पाखण्ड-अन्ध- विश्वास का प्रचार करते हैं उन्हें अपने मत का विज्ञापन करने में तनिक भी संकोच नहीं होता, और हम सृष्टिक्रम तथा प्रत्यक्षादि प्रमाणों के अनुकूल ज्ञान-विज्ञान, तर्क, युक्ति, न्याय, बुद्धि संगत विचार व्यक्त करनेवाले अपनी संस्था का नाम बताने में भयभीत होते हैं। इसका सीधा अर्थ यह हुआ कि पवित्र वैदिक मान्यताओं को प्रस्तुत करते समय हमसे भूलें हुई और हो रही हैं। हम चाहते हैं अब उन भूलों की पुनरावर्ती न हो। किसी ने ठीक ही कहा है- कुशल व्यापारी अपने हल्के सामान को भी अच्छे भाव में बेच देता है, और अयोग्य दुकानदार की विशुद्ध वस्तुएँ पड़ी रह जाती हैं।

मूर्तिपूजा का विरोध मत करो - वैदिक सन्ध्या-हवन सिखाओ

हमारे विचार से आर्यसमाज के विद्वान् अपने प्रवचनों में यदि मूर्तिपूजा का विरोध न करके **सन्ध्या-हवन** की उपयोगिता पर विशेष बल देते तो वैदिकधर्म का अधिक विस्तार हो जाता। मूर्तिपूजा को अनुचित बतानेवाले तो और भी अनेक मत-पन्थ विद्यमान हैं, किन्तु **वैदिक सन्ध्या-हवन** का प्रचार करने वाला आर्यसमाज के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं है।

हम देख रहे हैं- आर्यसमाज की स्थापना के पश्चात् मूर्तिपूजा और अधिक होने लगी है। इस सम्बन्ध में हमारे विद्वानों द्वारा किये गये शास्त्रार्थों तथा अन्य परिश्रमों का सन्तोषप्रद परिणाम सामने नहीं आया। क्योंकि मूर्तिपूजा वाली मान्यता की जड़े बहुत गहरी पहुँच चुकी हैं। इसके सहारे लाखों परिवार पल रहे हैं, अर्थात् यह करोड़ों व्यक्तियों की आजीविका का साधन बनी हुई है।

महर्षि दयानन्द से पूर्व श्री गुरु नानकदेव जी एवं श्री सन्त कबीरदास जी आदि ने भी मूर्तिपूजा को अनावश्यक तथा अनुचित बताया था, किन्तु उनकी वाणियों का कोई विशेष प्रभाव नहीं हुआ। हजारों नये मन्दिर बने और बनते जा रहे हैं। इसलिये हम कहते हैं कि जिनकी रोजी-रोटी का मूर्तिपूजा से कोई सम्बन्ध नहीं है, उन श्रद्धालु नर नारियों को **सन्ध्या-हवन** के प्रति निष्ठावान बनाकर **वैदिकधर्म का विस्तार** किया जा सकता है।

-वैदिक मिशनरी- कमलेश कुमार आर्य अग्निहोत्री-अहमदाबाद

www.thearyasamaj.org

ओ३म्

ब्रह्मविचरणी विश्व वारा

आज के युग में रिषि, साधारण साधु, संन्यासी को ही समझा जाता है किन्तु प्राचीन काल में कई प्रकार के रिषी, महरिषी, देवरिषी आदि कई रुपों में इन की चर्चा सुनने को मिलती है । किसी साधु के लिए, किसी संन्यासी के लिए इतने सम्बोधन क्यों? जब हम इस की महीनता से जांच करते हैं तो हम पाते हैं कि यह आज की ही भान्ति विभिन्न प्रकार की योग्याताओं सम्बन्धी उपाधियां ही होती थीं। कोई शिक्शा का दान करने वाला है, कोई वैग्यानिक है, कोई सी. ए. है तो कोई चिकित्सक है। इस प्रकार ही रिषी, महरिषी, देवरिषी, ब्रह्मरिषी आदि उपाधियां, उनकी योग्यता के आधार पर उनके कार्य, उनके व्यवसाय के आधार पर होती थीं। यह भी अध्यापक, चिकित्सक, वैग्यानिक आदि विभिन्न स्तरों पर होते थे। इन में महिलाओं और पुरुष दोनों प्रकार के लोग आज की ही भान्ति होते थे।

कुछ इस प्रकार की ही अवस्था हम एक बहुत बडे रिषी अत्रि के सम्बन्ध में पाते है। उनके प्रभाव व प्रयास का परिणाम हुआ कि उनकी सुपुत्री ने वेद पर अत्यधिक कार्य किया और उसने रिग्वेद के अश्टम मण्डल के सुक्त संक्या ९१ पर अत्यधिक कार्य किया। इस की रिचा संख्या १ से ले कर सात तक खूब चिन्तन मनन किया तथा इतना अधिक कार्य किया कि उसका कार्य अन्यतम हो गया । इस कारण इन रिग्वेद केअष्टम मण्डल सूक्त ९१ की रिचा १ से ७ तक के सब मन्त्रों की रिषी स्वीकार किया गया और आज तक वह इन मन्त्रों की रिषी चली आ रही है।

अत्रि ऋषि के इस अत्रि वंश में ही आगे चलकर एक अन्य विदूषी कन्या भी उत्पन्न हुई इस कन्या का नाम विश्व वारा था । इस कन्या को भी वेद में अत्यधिक रुचि थी। मेधावी तो यह थी ही । इस की विशेष रुचि अतिथि सत्कार के समन्ध में थी। इसलिए इस ने ऋग्वेद के अतिथि सत्कार सम्बन्धी मन्त्रों को पकडा तथा इन मन्त्रों पर कार्य करने लगी। उसने इन मन्त्रों पर भरपूर चिन्तन किया। भरपूर मनन किया तथा इन मन्त्रों को पूरी भान्ति से आत्म सात कर लिया ।

उसके इस चिन्तन मनन, उसके इस पुरुषार्थ का यह परिणाम हुआ कि उसने ऋग्वेद के पांचवें मण्डल द्वितीय अनुवाक के अट्टाइसवें सूक्त का साक्शात दर्शन करते हुए इसके गहन रहस्यों से साक्शात किया, इन्हें समझा तथा इन की विषद व्याख्या की । इस कारण इसे भी अपाल की ही भान्ती इस सूक्त का ऋग्वेद पद प्राप्त हो गया ।

विश्व वारा ने अपने प्रयोगों के द्वारा जाना कि किस प्रकार, किस विधि से एक स्त्री को अपने घर आये अतिथि का सावधानी पूर्वक सत्कार करना चाहिये। अतिथि सत्कार के साथ ही एक अन्य रहस्य से भी इस विश्ववारा ने पर्दा उठाते हुए स्पष्ट किया कि यज्ञ के लिए कौन सी तथा कैसे हविष्य पदार्थ दिए जावें तो इस के क्या परिणाम निकलेंगे। उसने यह भी बताया कि यज्ञ में विभीन्न कार्यों के लिए, विभिन्न उपयोगों के लिए कौन कौन सी सामग्री का प्रयोग किया जावे, जिस से हमारा यह यज्ञ का कार्य, यज्ञ का उद्देश्य सिद्ध हो । इस के साथ उसने इस तथ्य को भी भली भान्ति समझ कर स्पष्ट किया कि अपने पति के प्रजापत्य अग्नि की भी रक्शा पत्रि को करनी चाहिये। जब वह पति के प्रजापत्य की रक्शा करती है तो वह उत्तम, सन्तान की अधिकारी भी बन जाती है ।

डा. अशोक आर्य
१०४- शिप्रा अपार्टमेंट, कौशामवी-२०१०१०
गाज़ियाबाद, फोन : ०१२० २७७ ३४००

आसाम में दिमाहासाऊ जिले में नए आर्ष गुरुकुल की स्थापना

आसाम के दिमाहासाऊ जिले में दियुंगबरा के पास तित्तिरिफांग आडिंग ग्राम के पास दयानन्द दुर्ग में राजा गोविन्दचन्द आर्ष गुरुकुलम् की स्थापना पूज्य स्वामी धर्मानन्द जी के करकमलों से १ अगस्त को हो गई है ।

इस गुरुकुल के लिए स्थानीय लोगों से ५० बिघा भूमि तथा बने बनाएं मकान प्रारम्भ में कार्य चलाने के लिए मिल गए हैं । प्राचीन भारतीय संस्कृत की पद्धति से वैदिक शिक्षा चलाने के लिए स्थानीय जनता की बहुत इचछा थी । अतः दो दिन के अन्दर ही १०० से अधिक बालक प्रविष्ट हो गए। आगे प्रवेश रोकना पड़ा । इस गुरुकुल का संचालन गुरुकुल आश्रम आमसेना के सुयोग्य स्नातक आचार्य सुरेशचन्द्र जी शास्त्री एवं आचार्य महेन्द्र कुमार शास्त्री कर रहे हैं । आसाम में यह आर्ष गुरुकुल वैदिक संस्कृति एवं राष्ट्रीय एकता का केन्द्र बनेगा, ऐसी आशा है ।

-आचार्य कोमल कुमार

www.thearyasamaj.org

मनुर्भव

प्राय: यह वाक्य सुनने को मिलते हैं- कि मनुष्य संसार का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है, परमात्मा की सृष्टि मे सर्वोत्तम कृति मनुष्य ही है, सर्वाधिक बुद्धि मनुष्य के पास ही है आदि-आदि। इसी विचार के परिप्रेक्ष्य में यह भी स्थापना की जाती है कि जगत् के अन्दर सभी पदार्थ मनुष्य के लिए ही बनें है। आश्चर्य की बात तो यह है कि मनुष्य को श्रेष्ठ बताने के लिए कोई मनुष्येतर समूह आगे नहीं आया अपितु अपने मुंह मियां मिठ्ठू बनने वाली लोकोक्ति को ही मनुष्य चरितार्थ कर रहा है।

वेद का आदेश है ''मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्'' अर्थात् मनुष्य बनो और अपनी सन्तति को दिव्य गुणों से युक्त बनाओ ! इसका अभिप्राय यह हुआ कि मनुष्य उत्पन्न नहीं होता अपितु बनना पड़ता है इस विचार के आलोक में यह स्पष्ट होता है कि यदि मनुष्य बन गये तो ''श्रेष्ठता'' की कसौटी पर खरे उत्तर सकते हैं । अन्यथा पंचतत्वों से बना यह शरीर जैसा पशु - पक्षियों का है वैसा ही मनुष्य का होता है। किसी आकृति विशेष शरीर विशेष से श्रेष्ठता सिद्ध नहीं होती । श्रेष्ठता का आधार तो कुछ और ही है जो परिश्रम पुरूषार्थ से प्राप्त किया जा सकता है। मानव धर्मशास्त्र व सृष्टि के प्रथम मानवीय संविधान निर्माता महर्षि मनु ने अपने कालजयी ग्रन्थ मनुस्मृति में मनुष्य की श्रेष्ठता की कसौटी दी है-

भूतानां प्राणित: श्रेष्ठा: प्राणिषु बुद्धि जीविन्:
बुद्धिमत्सु नरा: श्रेष्ठा: नरेषु ब्राह्मणा स्मृता: ।
ब्राह्मणेषु कृतबुद्धय: कृतबुद्धिषु कत्तरि:श्रेष्ठा:,
कर्तृषु ब्रह्मवेदिन: सदा स्मृता: ।।

अर्थात् चर-अचर जगत् में चेतन प्राणी श्रेष्ठ है, चेतन प्राणियों में बुद्धि वाले जीवन श्रेष्ठ हैं, (मनुष्य के अतिरिक्त भी अनेक प्राणी ऐसे हैं जो अपनी-अपनी स्वाभाविक क्षमता के क्षेत्र में मनुष्य से कहीं अधिक सामर्थ्यवान हैं) बुद्धि जीवी प्राणियों में भी मनुष्य श्रेष्ठ है। मनुष्य शरीर धारियों में भी वही व्यक्ति श्रेष्ठ है जो ज्ञान पूर्वक, विचार पूर्वक कर्म करता है, ज्ञान-विज्ञान के प्रसार में शक्ति लगाता है उसे ही ब्राह्मण कहा जा सकता है (जन्म से कोई ब्राह्मण क्षत्रिय आदि नहीं होता अपितु कर्म से ही वर्ण निर्धारित होता है) ब्राह्मण भी वही श्रेष्ठ है जो प्राप्त ज्ञान को कर्म में परिणत् करता है, ज्ञान के अनुकूल आचरण करने की बुद्धि बनाता है, और कृत बुद्धि में भी कर्त्ता श्रेष्ठ है। कर्म, प्रवृत्त ज्ञान ही अपनाता है अन्यथा वह 'रट्ट् तोते से अधिक कुछ भी नहीं हैं।' कर्त्ता भी वही श्रेष्ठ है जो अपने समस्त कर्मो को ब्रहह्म अर्थात् परमपिता परमात्मा के ज्ञान में समर्पित करता है। अर्थात् ब्रह्मदेवी बनता है।

अभिप्राय यह हुआ कि मनुष्य के लिए अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करना आवश्यक है, उक्त क्रम को जाने बिना, आचरण में लाए बिना केवल मनुष्य शरीर प्राप्त करने मात्र से ही श्रेष्ठता सिद्ध नहीं होती है ।

उपर्युक्त विश्लेषण से एक प्रश्न और उत्पन्न होता है कि हम श्रेष्ठता की प्रक्रिया के साधक कारणों तक भी पहुँचें कि इस समग्र चिन्तन का आधार क्या है? उत्तर होगा सतत् विचारशील रहकर अपना निर्माण करना, विचार की उत्पत्ति बुद्धि नामक तत्त्व से होती है। निष्कर्ष यह हुआ कि श्रेष्ठता का आधार बुद्धि का विकास ही है।

संसार में मनुष्य से इतर प्राणियों के पास स्वाभाविक ज्ञान इतना होता है कि वे अपना सम्पूर्ण जीवन व्यतीत कर सकते हैं, गाय, भैंस अश्व (घोड़ा) हाथी, सिंह आदि सभी प्राणी अपनी -अपनी जाति के स्वाभाविक ज्ञान से स्वत: ही पूर्ण हो जाते हैं किसी शिक्षणालय अथवा शिक्षक की आवश्यकता नहीं होती जबकि मनुष्य की सन्तान बिना सिखाए चलना बोलना, तैरना, पढ़ना, लिखना कुछ भी नहीं कर सकते । पाश्चात्य प्रयोगधर्मी कतिपय शिक्षाविदों ने भी प्रयोग किए कि और मनुष्य के बच्चे को जन्म होते ही पशुओं के मध्य में मानव सभ्यता से दूर रखा । १२ वर्ष की आयु तक मनुष्य की आवाज नहीं सुनने दी थी वह बालक पशुवत् व्यवहार करने लगे। असुर बेनीपाल के परीक्षण का पता लगाने का काम लेयार्ड (Layard) एवं रालिन्सन (Rowlinson) नामक अन्वेषक ने किया । उन परीक्षणों से यह स्पष्ट हुआ कि मनुष्य का स्वाभाविक ज्ञान न के बराबर है, साथ ही यह भी तथ्य है कि मनुष्य को परमात्मा द्वारा प्रदत् बुद्धि का सर्वतोन्मुखी विकास हो सकता है, एक वाक्य में कहा जाय तो यह तथ्य सत्य है कि संसार का कोई भी ज्ञान ऐसा नहीं जिसे मनुष्य प्राप्त न कर सकता हो। ऐसी उत्तम बुद्धि का धनी मनुष्य क्यों भटक रहा है? इसका कारण जो मेरी मति में आता है, वह है कि उसने जीवन का उद्देश्य निश्चित नहीं किया ।

वैदिक साहित्य एवं वैदिक दर्शन में मानव जीवन का उद्देश्य स्पष्ट है- भोग एवं अपवर्ग पूर्वजन्मों में किए गये कर्मो के आधार पर यह जन्म प्राप्त हुआ है साथ ही यह जन्म कर्मो करने के लिए प्राप्त-कुरूक्षेत्र है, कर्मों का फल भोग भी होता है और शुभ कर्मों द्वारा, सात्विक कर्मों द्वारा कर्मों के बन्धन को काटने का सुअवसर भी मनुष्य जीवन में ही प्राप्त होता है। कर्मबन्धन क्षीण होने का परिणाम सुख व दु:ख से छूटना ही अपवर्ग अर्थात् मोक्ष कहलाता है। महर्षि पतन्जलि ने योग दर्शन में कहा हैं-

'योगापवर्गार्थ दृश्यम्'

यह सृष्टि परमात्मा ने जीवों के कल्याणार्थ रची है। मनुष्य जीवन का उद्देश्य भौतिक उन्नति एवं आध्यात्मिक उत्कर्ष को प्राप्त कर दु:खों से अत्यन्त छुटकारा प्राप्त करना दोनों ही हैं। महर्षि कपिल ने सांख्य दर्शन में कहा हैं- ''**तदत्यन्तविमोक्षोऽपवर्ग:**''

दु:खों से पूर्णत्: विमोक्ष (छूटना) ही अपवर्ग है। यह उद्देश्य सात्विक बुद्धि ही पूर्ण कर सकती है। ऋग्वेद में आता हैं कि परमात्मा नें मनुष्य को जो बुद्धि दी है वह सप्तशीर्ष्णी है अर्थात् सात सिरवाली है। इसकी व्याख्या कायन्दक नीति शास्त्र में की गयी है-

शुश्रूषा श्रवणं चैव ग्रहणं धारणं तथा ।
ऊहापोह अर्थाविज्ञानं तत्वज्ञानं च स्मृता:।।

www.thearyasamaj.org

अर्थात् मनुष्य बनने के लिए आवश्यक है कि व्यक्ति अपने बुद्धि का क्रमश: विकास करे, अपनी भौतिक व आत्मिक दोनों प्रकार की उन्नत्ति के लिए उपर्युक्त सात सिरों को खोलना अति आवश्यक है।

१) **सुश्रुषा**– बुद्धि का प्राथमिक विकास अपने अन्दर प्रश्न पैदा करने तथा उनके समाधान की सुनने के इच्छा पैदा करने से प्रारम्भ होता है– (छोटा बालक/बालिका) शिशु अपनी मां से प्रश्न करना प्रारम्भ करता है तो रूकता नहीं, संकोच नहीं करता क्या है? यह कहां से है? इसका क्या उपयोग है? इन तीन बिन्दुओं पर आधारित जिज्ञासा होती है और उन सभी प्रश्नों का समाधान चाहता है। सुश्रुषा का अर्थ सुनने के इच्छा रखता है। संक्षेप से कह सकते है कि यदि बाल्यकाल जैसी जिज्ञासा आजीवन बनी रहे अथवा यूँ कहा जाए कि भौतिक के साथ साथ आत्मिक प्रश्न भी उत्पन्न होते रहें और उनका उत्तर उपयुक्त अथवा साहित्य से खोजा जाए तो समाधान अवश्य होगा बस अपनी सुश्रुषा को जागृत रखिए।

२) **श्रवण**– बुद्धि का दूसरा सिर सुनने की कला है जिज्ञासु की पहली कसौटी है कि वह सुनने की कला का विकास करे, जैसे-जैसे आयु बढ़ती है हमारे अन्दर प्राप्त ज्ञान का अहंकार आता है कि हम सुनना नहीं चाहते, केवल सुनाना चाहते है समझना नहीं चाहते, समझाना चाहते हैं, करना नहीं चाहते, करवाना अच्छा लगने लगता है। यही दोष हमारी बुद्धि का दूसरा सिर जागृत नहीं होने देता। आइऐ सुने कला का विकास कर उत्तम क्षेत्र बनने का प्रयास करें।

३) **ग्रहण**– बुद्धि का तीसरा सिर ग्रहण क्षमता को बताया। सामान्यत: मनुष्य सुनता तो है परन्तु उसमें ग्रहण क्या करना है यह महत्त्वपूर्ण है। ग्रहण करने की स्थिति स्वाध्याय व चिन्तन से बनती है। बुद्धि विकास का सोपान ग्रहण करना। अग्राह्य को छोड़ना ही है। क्योंकि अनेक ऐसे विषय होते हैं जिनका ग्रहण आवश्यक नहीं होता। ग्रहण करने की कला का विकास आवश्यक हैं।

४) **धारण**– बुद्धि का चौथा सिर धारण करना है जो, इच्छापूर्वक सुना, उसे ग्रहण किया उसके सार को मनन पूर्वक धारण करना भी एक कला है। यथा मनुष्य जीवन का उद्देश्य क्या है? उत्तर मिला खाना पीना और मौज करना अथवा-उत्तम गुणों को धारण करना। सुख एवं शान्ति के लिए प्रयासरत् रहना। इसमें से प्रथम विचार भोगवादी है, दूसरा आत्मोन्नति का साधन है, इसमें से चयन कर द्वितीय धारण करना।

५) **तर्क वितर्क (उहापोह)**– बुद्धि का पाँचवा सिर प्रत्येक श्रुत विषय का दार्शनिक विश्लेषण करना है। यह क्षमता प्रत्येक मनुष्य को परमात्मा ने दी है। इसका उपयोग भौतिक व आध्यात्मिक दोनों क्षेत्रों में करना भी एक कला है। **महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थ प्रकाश** में प्रत्येक विषय को तर्क की कसौटी पर कसा है। प्रत्युत्पन्नमति वाला व्यक्ति प्रत्येक समस्या को सहजता से समाधान तक पहुँचाता है।

६) **अर्थज्ञान**– बुद्धि के पांच द्वार अथवा सिर जागृत होते है तो मनुष्य यथार्थ ज्ञान प्राप्त करता है, जो वस्तु जैसी है उसे उसी स्वरूप में जानना ही अर्थ ज्ञान है।

७) **तत्वज्ञान**– संसार में मनुष्य जो कुछ प्रयास, पुरुषार्थ व प्रयत्न करता है वह स्थूल से सूक्ष्म तक पहुँचाने वाला ही तो सार्थक है अन्यथा स्थूल व जड़ की साधना निष्फल होती है। ईश्वर जीव व प्रकृति तीनी तत्वों का पृथक्-पृथक् ज्ञान व अनुभूति ही तत्व ज्ञान होता है।

इस प्रकार बुद्धि का समुचित उपयोग कर जीवन को सार्थक बनाना ही मनुष्य की श्रेष्ठता को सिद्ध करना है और यही पुरुषार्थ चतुष्टय-धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष की प्राप्ति का साधन है। संसार में रहते हुए सुखी रहना व शान्ति को प्राप्त करते हुए मोक्ष तक पहुँचाने का मार्ग वेद ज्ञान से ही गुजरता है। योगेश्वर भगवान श्रीकृष्ण ने भी गीता में कहा है– ''ऋते जानान्नमुक्तिः''

चिन्तक
डा. विनय विद्यालंकर
एसोसिएट प्रोफेसर उच्चशिक्षा सेवा उत्तराखण्ड
दूरभाष : ०९४१२०४२४३०
Email- vinayvarsha.vidyalankar@gmail.com

Management of
OBESITY
WEIGHT REDUCTION

A Drugless Treatment with Yoga & Alternative Therapy with Stomach and Colon Cleaning

DATE : **MON. 25.11.2013 to FRI. 13.12.2013**
TIME : 7.30 a.m. to 8.30 a.m. Saturday : Class at 7 A.M.
FEES : **Rs. 2000/-** Sunday : Holiday.
VENUE : ARYA SAMAJ MANDIR, Linking Road, Santacruz (West).
COURSE DIRECTOR : Yogashiromani **RAGHAVA SOMESHWAR** With 31 years Experience. He has conducted more than 600 Health Management Workshops With Positive Results in many Countries.
Enquiry : **98692 67131/2660 2800 / 98197 07140**

• FEEDBACK FROM STUDENTS OF EARLIER WORKSHOP •

BHAKTI SHETTY (Service) : It has been extremely refreshing course for me. Sir's irstructions distracts from discomfort and motivates one to push I have reduced 5kg. and 5" on abdominal,

PRIYADARSHINI POOJARI ((Computer Education): This is the second time I am doing this course. I have reduced 3 kgs. and abdominal 5". This is a perfect program for the weight loss. The teachers not only trains us, but also keep us highly motivated.

RESHMA NAGAPAL (Housewife) : I have lost 15 kg. after attending 3 workshops. By joining the Workshop my acidity is under control and I have become quite active in my day to day work.

www.thearyasamaj.org

"भारत के उज्ज्वल इतिहास में नैतिकता के कुछ महत्वपूर्ण प्रसंग"

जब हम भारत के उज्ज्वल इतिहास का अवलोकन करते हैं तो हमें सैकडों नहीं सहस्त्रो प्रसंग ऐसे मिलते हैं, जिनसे हमें भारत का इतिहास, नैतिकता व सचरित्रता में सबसे ऊंचा दिखाई देता है। यहाँ इस लेख में कुछ प्रसंगों को प्रस्तुत करके हम इस विषय की संपुष्टि करेंगे।

१. सबसे पहले हम रामायण काल के इस प्रसंग से आरम्भ करते है, जब श्रीराम व लक्ष्मण सीतामाताजी के खोज में जगह-जगह ढूंढते हुए किष्कन्धा पर्वत के पास पहुंचे, जहाँ सुग्रीव व हनुमान बैठे मन्त्रणा कर रहे थे। सुग्रीव ने जब दो युवकों को संन्यासी के भेष में अपनी ओर आते देखा तो उसने हनुमान जी को उनके आने का कारण पूछने के लिए भेजा। हनुमान जी नीचे उतरकर श्रीराम और लक्ष्मण से आने का कारण पूछा। श्रीराम ने अपने आने का विस्तारपूर्वक कारण बता दिया। हनुमान जी ने कहा कि किसी माता को लेकर रावण हवाई मार्ग से जा रहा था। माता जी रो रही थी और कुछ गहने उसने हमको बैठा देखकर फेंके थे, वह गहने हमारे पास हैं। आप दोनों ऊपर चलो और उन गहनों को पहचान कर ले लो। वे हनुमान जी के साथ पर्वत पर चले गए। पहले तो सुग्रीव से मिले, फिर उन गहनों को देखा जो सीता माता ने फेंके थे। गहनों को देखकर श्रीराम ने लक्ष्मण से कहा कि हे लक्ष्मण! जरा इन गहनों को तो देखो, क्या यह गहने तुम्हारी भाभी जी के हैं। तब लक्ष्मण ने जो कहा, वह चरित्र का इतना उच्चतम आदर्श संसार के इतिहास में खोजने से भी नहीं मिलेगा। लक्ष्मण ने कहा भैया! मैं तो सीता माता के पैरों के गहने ही पहचान सकता हूँ कारण प्रात: काल उठकर मैं भाभी जी के पैरों को छूकर नमस्ते करता था, तब मेरी दृष्टि पैरों पर ही पडती थी, इसलिए पैरों के गहने तो मैं अवश्य ही देखता था, पर बाकी चेहरे के, माथे के, गले के और हाथों के गहनों को तो मैं नहीं पहचान सकूँगा कारण मैंने भाभी जी का चेहरा, गला, हाथ तो कभी देखे ही नहीं हैं। ऐसे ऊँचे चरित्र के कारण ही भारत का चरित्र आज भी महान् कहलाता हैं।

२. दूसरा प्रसंग भी रामायण काल का ही हैं। जब श्रीराम ने अपनी पूरी तैयारी लंका में प्रवेश करने की कर ली थी। हनुमानजी लंका जाकर सीता माता से मिलकर तथा लंका के पूरे भेद लेकर आ गया था तब रावण का छोटा भाई विभिषण श्रीराम से मिलने के लिए आया। तब श्रीराम की यह दूरदर्शिता थी कि वे समझ गये कि विभिषण, अपने भाई रावण से नाराज हो कर मेरे पास आया है और युद्ध में मेरे यह बहुत काम आयेगा। इसलिए श्रीराम ने, बिभिषण को देखते ही कहा, "आओ लंकेश, आओ"। तब लक्ष्मण ने श्रीराम से कहा, भैया! आपने बिभिषण को पहले ही लंकेश कह दिया? अभी तक न तो रावण से युद्ध शुरु हुआ है और न ही कोई हार-जीत हुई है। तब श्रीराम ने जो बात कही वह स्वर्ण अक्षरों में लिखने योग्य है। यह श्रीराम के अपने वचनों का पालन करने के लिए महान त्याग की भावना को दर्शाता है। श्रीराम ने कहा सुनो लक्ष्मण! पहली बात तो यह है कि हम न्याय और सत्य पर हैं, रावण अन्याय, असत्य पर है। न्याय और सत्य की सदैव जीत होती है। इसलिए हमारी जीत निश्चित है और जीतने पर बिभिषण को राजा बनायेंगे ही तब लंकेश कह देना कोई भूल नहीं हैं। यदि दुर्भाग्य वश हमारी हार हो जाती है, तो अयोध्या का राजा तो मैं हूँ ही। मैं बिभिषण को अपना अयोध्या का राज्य दे दूँगा। लंकेश और अयोध्येश में कोई विशेष अन्तर नहीं है। ऐसा उत्तर भारत के इतिहास में ही है, अन्य देशों के इतिहास में मिलना असम्भव है।

३. यह प्रसंग महाभारत काल का है। जब पाँचो पाण्डव जूए में हारकर जंगल में विचरण कर रहे थे तब उनको बडी प्यास लगी, तब युधिष्ठिर ने एक बर्तन देकर अपने सबसे छोटे भाई सहदेव को पानी लाने के लिए कहा। सहदेव कई जगह खोजते हुए एक तालाब के पास पहुँचा, जिसकी रक्षा एक यक्ष कर रहा था। यक्ष ने सहदेव से कहा कि पानी लेने से पहले तुमको मेरे प्रश्नों का उत्तर देना पडेगा। यदि उत्तर सही दियें तो पानी ले पाओगे और यदि उत्तर नही दे सके तो तुम्हे मुर्छित कर दूँगा। सहदेव सही उत्तर न दे सका और यक्ष ने उसे मूर्छित कर दिया। काफी देर तक जब सहदेव नहीं पहुँचा तो युधिष्ठिर ने नकुल को पानी लेने भेजा। नकुल भी उसी तालाब के पास पहुँचा। उससे भी यक्ष ने अपने प्रश्नों के उत्तर देने के लिए कहा। उत्तर न देने पर उसे भी मूर्छित कर दिया। नकुल भी काफी देर तक न पहुंचने पर अर्जुन को भेजा। यही घटना अर्जुन से भी घटी। अर्जुन के न पहुंचने पर भीम को भेजा। भीम से भी वही घटना घटी। चारों भाईयों को यक्ष ने मूर्छित कर दिया। भीम के न पहुंचने पर अन्त में स्वयं युधिष्ठिर पानी लाने के लिए गये और उसी तालाब के पास पहुंचे। युधिष्ठिर को भी यक्ष ने अपने प्रश्नों के उत्तर देकर ही पानी लेने के लिए कहा। युधिष्ठिर यक्ष के प्रश्नों के उत्तर देने के लिए तैयार हो गये और यक्ष ने लगभग पन्द्रह प्रश्न दिये जिसमें मुख्य तीन प्रश्न ये थे - १. पृथ्वी से बडा कौन है? २. आकाश से ऊँचा कौन है? ३. मन से बडा आश्चर्य क्या है? युधिष्ठिर ने प्रश्नों का उत्तर देते हुए कहा कि पृथ्वी से बडी माता है, आकाश से ऊँचा पिता है और तिसरे प्रश्न के उत्तर में कहा कि ... दुनिया का हर आदमी रोजाना मरने वालों को जाते हुए देखता हैं, पर वह यह समझता है कि मैं कभी नही मरूँगा बुरे कर्म करता रहता है। इससे बडा आश्चर्य और क्या हो सकता है। प्रश्नों का उत्तर सुनकर यक्ष बडा प्रसन्न हुआ और बोला कि मैं आपके चारों भाईयों में से किसी एक को जीवित कर सकता हूँ। तब युधिष्ठिर ने कहा कि हम दो माताओं के पुत्र है, एक कुन्ती और दुसरी माद्री। कुन्ती का सबसे बडा पुत्र मैं हूँ और माद्री का बडा पुत्र नकुल है, तो आप नकुल को जीवित कर देवें जिससे दोनों माताओं के एक-एक पुत्र हो जाएगे। यह न्यायोचित बात सुनकर यक्ष बडा प्रसन्न हुआ और चारों भाईयों को, जो मूर्छित थे, उनको दवा पिलाकर जीवित कर दिया। यह घटना युधिष्ठिर को धर्मराज कहलाने में बडी सहयोगी सिद्ध हुई।

www.thearyasamaj.org

४. यह चौथा प्रसंग अभी चार सौ वर्ष पहले का शिवाजी महाराज के जीवन का है। शिवाजी महाराज एक साहसी, बलवान, कूटनीतिज्ञ व एक कुशल नेता के साथ-साथ एक महान चरित्र्यवान व्यक्ति भी थे। उन्होंनें अपनी माता जीजाबाई से बडी ऊँची-ऊँची धार्मिक और चारित्रिक शिक्षा पाई थी। इनके जीवन की एक घटना है कि उनके सैनिकों को घूमते फिरते एक बहुत सुन्दर मुस्लिम युवा लडकी मिल गई। सैनिकों ने समझा कि हम लडकी को अपने महाराज शिवाजी महाराज को एक तौफा के रूप में देवेंगे तो वे बहुत खुश होवेंगे और हमको काफी इनाम देवेंगे। यही सोचकर वे सैनिक इस लडकी को शिवाजी महाराज के पास ले जाकर बोले कि महाराज! हम आपके लिए एक बहुत बढिया तौफा लाये है और उस लडकी को शिवाजी महाराज के सामने प्रस्तुत कर दिया। शिवाजी की आंखे लाल हो गई और अपने सैनिकों से कहा कि आप लोग अभी तक अपने राजा को समझ नही पाये है। मैं एक हिन्दू राजा हूँ, हमारे धर्म में बडी स्त्री को माता, बराबर वाली को बहन और छोटी को पुत्री के समान समझा जाता है। यह मेरी पुत्री है और अपने पिता जी से मिलने आई है। इसलिए मेरा कर्तव्य है कि इसको कुछ गहने-कपडें देकर मैं इसे बिदा करूँ। और उसी समय कुछ गहनें-कपडें मंगवाकर उस मुस्लिम बेटी को ससन्मान बिदा किया। यह सचरित्रता की एक पराकाष्ठा थी।

५. यह प्रसंग महामन्त्री चाणक्य का है। जब वह अवध के महाराजा महानन्द द्वारा किये गये अपमान से दु:खित होकर इस प्रतिज्ञा के साथ बाहर आ गये कि मैं इस राजा का सर्वनाश करके ही रहूँगा और इससे विलक्षण बुद्धिवाले एक बालक चन्द्रगुप्त को अपने पास रखकर उसको अस्त्र-शस्त्र विद्या सिखलाकर उसके द्वारा अवध के राजा महानन्द को हराकर चन्द्रगुप्त को ही अवध का एक महान प्रतापी राजा बनाकर राजा महानन्द के विशाल राज्य में एक कुटिया बनाकर रहने लगा। राज्य का सारा काम-काज जंगल में बैठकर ही सम्हालता था और राज्य की व्यवस्था इतनी सुन्दर व सुदृढ बना रखी थी कि कोई भी राजा उसके राज्य पर आक्रमण करने का दुस्साहस नहीं कर सकता था। इसलिए प्रजा बडी सुखी व खुशहाल थी। यह निश्चित है, जब किसी राज्य का महामन्त्री कुटिया में रहकर प्रजा की देख-भाल करेगा तो उसकी प्रजा महलों में रहकर अवश्य ही सुख की नींद सोवेगी।

इन प्रसंगो से आज हमारे राजा, मन्त्री, सांसद व विधायकों को शिक्षा लेनी चाहिए ताकि, वे भी अपने पूर्वजों के भाँति अपना चरित्र बनावे, तभी हमारा देश स्वत: उन्नति और समृद्धि के शिखर पर पहुँचेगा और ''यथा राजा तथा प्रजा'' के अनुसार प्रजा भी चरित्रवान बनेगी और हमारा देश भारत पुन: ''विश्वगुरु'' कहलायेगा।

खुशहाल चन्द्र आर्य
गोविन्दराम आर्य ॲण्ड सन्स,
१८० महात्मा गान्धी रोड, दो तल्ला
कोलकता ७००००७
टेलि. न. २२१८३८२५, ०६६ २६७५८९०३.

यज्ञोपवीतं परमं पुनी तम

हृदय रोगों का जनेऊ से निदान

-मोहनलाल मागो

जनेऊ, यज्ञोपवीत, यज्ञसूत्र अथवा ब्रह्मसूत्र का मानव स्वास्थ्य से गहरा सम्बन्ध है। यज्ञोपवीत भारतीय संस्कृति का मौलिक सूत्र है। इस सूत्र का सम्बन्ध हमारे आध्यात्मिक, आधिदैविक तथा आधिभौतिक जीवन से बहुत पुराना है।

बायें कन्धे पर स्थित जनेऊ देवयान की प्रथा दायें कन्धे पर स्थित पितृयान का द्योतक है। इटली में बारी विश्वविद्यालय के न्यूरोसर्जन प्रो. एनारीका पिरान्जेली ने प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध किया है कि कान के मूल में चारों तरफ दबाव डालने से हृदय मजबूत होता है। पिराजेली ने हिन्दुओं द्वारा कान पर लपेटे गये जनेऊ को हृदय रोगों से बचाने वाली ढाल कहा है। लन्दन के 'क्वीन एलिजाबेथ चिल्ड्रन अस्पताल' के डॉ. सक्सेना के अनुसार हिन्दुओं द्वारा मल-मूत्र त्याग के समय कान पर जनेऊ लपेटने का वैज्ञानिक आधार है। ऐसा करने से आतों की उपकर्षण गति बढती हैं, जिससे कब्ज दूर होती है तथा मूत्राशय की मांसपेशियों का संकोच वेग के साथ होता है। कान के पास की नसों को जनेऊ से दबाने से बढ़े हुए रक्तचाप को नियन्त्रित तथा कष्ट देनेवाली श्वास प्रक्रिया को सामान्य किया जा सकता है। योगशास्त्रों में स्मरणशक्ति तथा नेत्रज्योति बढ़ाने के लिए कर्णपीडासन का बहुत महत्व बताया गया हैं। इस आसन द्वारा घुटनों द्वारा कान पर दबाव डाला जाता है। कान पर कसकर जनेऊ लपेटने से कर्णपीडासन के सभी लाभों की प्राप्ति होती है। यह है विश्वगुरु भारतीय संस्कृति की अनूठी देन विश्व को, जहाँ यह वैज्ञानिक परख जाँच-पडताल पर अकाट्य तौर पर खरी उतरी है। कुछ धागों से हृदयरोग जैसी जानलेवा बीमारी को रोक लेना, वह भी बिना दुष्प्रभाव (साइड इफेक्ट) जो आज बहुप्रचलित, बहुचर्चित एलोपेथी में लाखों रुपये की लागत चुकाने पर भी शायद सम्भव नहीं हैं।

हम भारतीय को अपनी भारतीयता पर गर्व और विश्वास करना ही होगा; क्योंकि विदेशी वैज्ञानिक विदेशोंके उच्चवर्गीय, सभ्रान्त नागरिकों को भारतीय प्रणालियों के शारिरीक, मानसिक और आत्मिक लाभों से परिचित करा रहे हैं।

डा. तारासिंह आर्य
प्राकृतिक चिकित्सक
मो.: ०९२२४ २८२ १६४.

www.thearyasamaj.org

"यज्ञ की प्रमाणिकता"

यज्ञ द्वारा जहां एक और सुगन्धि का विस्तार होता है वहीं दूसरी ओर वायु प्रदुषण का निवारण भी होता है। इसके साथ साथ हमारे शरीर व मन के अनेक रोगों का उपचार भी होता हैं।

रोगी को दवाइयों से जो लाभ मिलता है उससे अधिक लाभ इन्जेक्शन द्वारा मिलता है और इन्जेक्शन से शीघ्र लाभ यज्ञ द्वारा वायु के माध्यम से रोगी को मिलता है। यज्ञ द्वारा उत्पन्न गैस में आक्सीजन की मात्रा अधिक होती हैं। इस आक्सीजन को प्राणवायु (Vital Energy) भी कहते हैं इस प्रभावशाली प्राण वायु में हमारें अन्दर के रोगों को मारने की अद्भुद् शक्ति होती है। यज्ञ के पास बैठे यजमान जब इस प्राण वायु को अपने अन्दर लेते हैं तो वह अन्दर जाकर प्रत्येक नस नाडियों में घुसकर विषाक्त द्रव्य (Toxins) को बाहर निकाल देती है, इससे व्यक्ति रोग मुक्त हो जाता है।

'सार्वदेशिक' के २४ जुलाई १९८४ के सम्पादकीय में लिखा था - "जीव विज्ञान के कुछ सूक्ष्म दर्शियों का दावा हैं कि अग्नि होम के धुंए से शरीर के भीतर जाने से उसके सूक्ष्म तन्तुओं पर प्रभाव पडता है। रक्त में निहित शूगर प्लेटों के धुएं के सामने रहने से उनके दायरे में कमी हो जाती है।"

एक अंग्रेजी पत्रिका 'मिरर' के अनुसार पश्चिम जर्मनी के अनुसंधान कर्ताओं का कहना है कि अग्निहोत्र की सामग्री के धुएं से जुकाम, सिरदर्द, छाले, पुराना बुखार, पेचिश, दाद, टॉन्सिल और जोडों का दर्द दूर हो जाते हैं।

"अग्निहोत्र की भस्म से पश्चिम जर्मनी की एक कम्पनी ने कई दवाईयां बनाई हैं जिनसे बिना किसी दुष्परिणाम के (Side Effects) सिरदर्द, जुकाम, दाद, दस्त, पेट की बिमारियां, आदि दूर हो जाती है।"

फ्रांस के एक विज्ञान वेत्ता ने बताया कि शक्कर जलाने से (यज्ञ में) हैजा, टी.बी. और चेचक के रोग दूर हो जाते हैं। मुनक्का, किशमिश जलाने से टाईफाइड के कीटाणु समाप्त हो जाते है।

फ्रांस के एक और वैज्ञानिक प्रो. टिलवर्ट ने यह निष्कर्ष निकाला है कि यज्ञ में शक्कर दहन से उत्पन्न धुएं में पर्यावरण परिशोधन की विचित्र शक्ति होती है। इससे क्षय रोग, बडी चेचक, छोटी चेचक, हैजा एवं तपेदिक (T.B.) के विषाणु (Virus) नष्ट हो जाते है।

ब्रिटिश शासन काल में मद्रास के सेनेटरी कमिशनर डा. कार्वन किंग ने कहा प्लेग फैलने पर विद्यार्थियों को घी, केसर व चावल मिलाकर हवन करने का परामर्श दिया था।

सूरत में १९९४ में प्लेग फैलने पर वहां के चिकित्सा अधिकारियों ने वातावरण को विषाणु रहित बनाने के लिए घी मिश्रित धुप, हल्दी एवं कपुर जलाने को कहा था और वहां हवन सामग्री के लाखों पैकेट भी बाटें थे।

१९८६ में भोपाल गैस काण्ड में जो परिवार घर में बैठकर हवन कर रहे थे वे इस कुप्रभाव से बचे रहे। सार्वदेशिक साप्ताहिक पत्र में इस अद्भुद बचाव का उल्लेख हुआ है।

भारत के सूक्ष्म जीव वैज्ञानिक डॉ. अरविन्द मांडकर लिखते है कि अग्नि होत्र के धुएं में सुक्ष्म जीवाणु (Bacteria) रोधक करने वाले फार्मलडीहाइड एवं अन्य अवरोधक तत्व होते हैं। प्रयोग करने के बाद उन्होनें पाया की सूक्ष्म जीवाणु की संख्या अग्नि होत्र के पश्चात ८० प्रतिशत कम हो गयी।

प्लेग के टीके के आविष्कर्ता फ्रांस के डाक्टर हैफकिन ने अपनी पुस्तक में लिखा है - "प्लेग के विष को कम करने के लिए कई महीने दवाईयों तथा पदार्थों पर व्यतीत हुए किन्तु जब गाय के घी का परीक्षण किया गया तो आश्चर्य चकित रह गया क्योंकि गोघृत का धुआं परम विष नाषक सिद्ध हुआ। हवन में प्रयुक्त घृत से प्लेग जनित कीटाणु नष्ट भ्रष्ट हो जाते हैं।"

इलाहबाद विश्व विद्यालय के रसायन विभाग के अध्यक्ष डॉ. सत्यप्रकाश जी ने यज्ञ पर अनेक अनुसंधान किए तथा उन्होंने यह साबित कर दिया कि यज्ञ द्वारा अनेक लाभ होते हैं। उन्होने अपनी पुस्तक Agnihotra में यज्ञ द्वारा उत्पन्न फौरमैल्डहाइड गैस के लाभ बताए। उन्होने बताया यह गैस एक शक्तिशाली कीटाणुनाशक तत्त्व है। अनेक पदार्थों को सडनें से बचा लेती है।

केम्बीयर एवं ब्रोचेट नामक वैज्ञानिकों ने अपने परीक्षणों से यह सिद्ध किया कि इस गैस से घर के गर्दे में से भी किटाणु नष्ट हो जाते हैं।

स्लेटर एवं रायडिल नामक वैज्ञानिकों ने परीक्षण कर बताया कि यज्ञ से १० मिनट के भीतर ही टाइफस वी कोलार्ड तथा कोलन के कीटाणु नष्ट हो गये। अन्य रोगों के कीटाणु ३० मिनट में नष्ट हो गये।

प्रश्न उठता है कि प्रदूषण को दूर करने के लिए धूप अगरबत्तियों का प्रयोग काफी नहीं है। इसका उत्तर स्वामी दयानन्द जी सरस्वती ने दिया है उन्होंने बताया उस सुगन्ध में हव सामर्थ्य नहीं है कि गृहस्थ वायु को बाहर निकाल कर शुद्ध वायु का प्रवेश करा सके। क्योंकि उसमें भेदक शक्ति नहीं हैं। अग्नि (यज्ञ द्वारा) की ही सामर्थ्य हैं कि उस वायु को और दुर्गन्ध युक्त पदार्थों को छिन्न भिन्न और हल्का करके, बाहर निकाल कर पवित्र वायु की प्रवेश कर देती हैं।

स्वामी जी ने तो यहां तक कह दिया जो व्यक्ति यज्ञ से शुद्ध किए हुए अन्न, जल और पवन आदि पदार्थों का भोजन करते हैं, वे निरोग होकर बुद्धि, बल, आरोग्य एवं दीर्घायु होते हैं।

अलीगढ प्रवास के दौरान जब स्वामी जी से सर सैयद जी ने पूछा - स्वामी जी आपकी बाते तो युक्ति संगत हैं, परन्तु यह समझ नहीं आता कि थोडे से वहन से वायु का सुधार कैसे हो सकता है? तब स्वामी जी ने उत्तर दिया - "जैसे कि थोडे से बघार से सारी दाल सुगन्धित हो जाती है और दूर तक उसकी सुगन्धित जाती है।"

यज्ञों का महत्व जानकर २२ सितम्बर १९७३ में वर्जीनीया में प्रथम यज्ञशाला का निर्माण हुआ जहां प्रतिदिन सूर्योदय एवं सूर्यास्त के समय हवन किया जाता है।

चिली देश के एण्डीज पर्वत पर एक विशिष्ट यज्ञ शाला का निर्माण

www.thearyasamaj.org

हुआ जहां वैज्ञानिक विधि से यज्ञ करके अनेक लोगों ने अनेकों रोगों से मुक्ति पाई है। अमेरीका की राजधानी वार्शिंग्टन में अग्नि होम विश्वविद्यालय की स्थापना हुई है, जहां अग्नि होम द्वारा कई प्रयोग एवं अनुसंधान किए गये हैं। उन खोजों द्वारा चमत्कारी लाभ मिले हैं -

क) मन्त्रोचारण एवं घी की आहुतियों से फसलो को चौगुणा करने मे सफलता मिली।
ख) खेतों में नियमित रूप से हवन करने से पौधे तेजी से बढते हैं।
ग) एक यज्ञ २०० एकड के खेतों के पौधों का स्वरूप बदलने में सक्षम है।
घ) यज्ञों का प्रभाव पौधों की जडों तक होता हैं उनसे जमीन में अधिक नमी बनी रहती है।
ङ) पौधों के कीटाणुओं के नाश के लिए हवन की राख काफी कारगर साबित हुई।

नेशनल बोटेनिकल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, लखनऊ ने भी काफी परीक्षण एवं अनुसंधान के बाद यह सिद्ध कर दिया कि हवन के प्रयोग से वायु का प्रदुषण बहुत अधिक मात्रा में खत्म हो जाता हैं।

यज्ञ द्वारा प्रदूषण मुक्त वातावरण तैयार होता है जिससे ग्लोबल वार्मिंग का खतरा काफी कम हो सकता है। क्योंकि यज्ञ का धुआं उपर उठकर ओजोन (Ozone) परत को परिषोधित करता है, जोडता है जिससे सूर्य की तेज व विषाक्त किरणें धरती पर नहीं पडती और हमारी धरती सुरक्षित हो सकती है।

अत: यदि हम रोग मुक्त होना चाहते हैं, दीर्घ जीवी होना चाहते हैं, यदि हम पर्यावरण को प्रदूषण मुक्त बनना चाहते हैं, कृषि, पौधे, वनस्पतियों की वृद्धि करना चाहते हैं, यदि हम ग्लोबल वार्मिगं से बचना चाहते हैं तो हमें नियमित यज्ञ करना होगा। आईए यज्ञ करें, एवं धरती बचाएं।

- संदीप आर्य
मन्त्री - वैदिक मिशन मुम्बई
०९९६९०३७८३७

सकारात्मक सोच प्रगति पर चलें !

- चन्द्रगुप्त आर्य

बचपन में माता पिता ने आर्य संस्कार प्रदान किये और पढ़ने के लिये उपलब्ध कराई आर्य समाज की विचारधारा वाली पुस्तकें; अतः मैट्रिक पास करने के पहले ही अनेक पाठ्येतर परीक्षाओं के पास करने का शौक पैदा हुआ! धर्मज्ञानी, सिद्धान्त शास्त्री, कोविद, प्रभाकर आदि उपधियाँ प्राप्त करने का 'गौरव' 14 वर्ष की आयु में ही मिल गया था। ऐसे मानस के साथ स्वाभाविक था कि अपने सहपाठियों को भी आर्य विचारों के अपनाने हेतु प्रेरित करता अतः इस उद्देश्य से समाज की कुछ पत्रिकायें उन्हें पढ़ने को दीं, किन्तु खेद ! उन सहपाठियों ने वे पत्रिकायें बड़े कड़वे शब्दों में वापस करते हुए कहा कि इन पत्रिकाओं में ''एक दूसरे पर कीचड़ उछालने का आख्यान ही प्रमुख हैं - हम उनसे दूर ही रहना चाहेंगे।'' शायद बचपन की बात फिर याद न आती यदि इस समय में भी ऐसी ही स्थिति न होती। आज भी हमारी अनेक पत्रिकायें ('परिवर्तन' उनमें शामिल नहीं है) एक दूसरे पर छींटा कशी, लांछन, आरोप प्रत्यारोप की रचनाओं से भरी पड़ी हैं जिन्हें 'सत्य' के नाम पर लिखा और छापा जाता है। लिखने वाले सम्भवतः ऐसा विचार करते हैं कि उनके लिख देने से सभी लोग उनकी बात के समर्थक हो जाएंगे। **मतभेद स्वाभाविक है, मन भेद से दूर रहना चाहिए।** क्योंकि 'मुण्डे मुण्डे मतिर्भिन्ना।' जब दो विभिन्न समुदाय एक दूसरे की आलोचना करते हुए अपनी बात कहते हैं तो ऐसा बहुत कम होता है कि दूसरे उनकी बात स्वीकार कर लें। परिणामतः कटुता बढ़ती जाती है, वाक् युद्ध या कलम युद्ध फैलता जाता है जब तक कि एक पक्ष निढ़ाल होकर शान्त न हो जाए। रचनात्मक कार्य रूक जाते हैं क्योंकि उनके लिए समय बचता ही नहीं। 'कुर्सी' पर अधिकार करना एक मात्र ध्येय बन जाता है - येन केन प्रकारेण। क्योंकि **जिसके पास 'कुर्सी' होगी उसके 'सात खून माफ'-समरथ को नहिं दोष गुसांई** । ऐसे में यदि कोई व्यक्ति अकेला ही या कुछ संवेदनाशील समूह कुछ अच्छा काम करना शुरू करता है तो विभिन्न प्रकार के 'अर्थ' उसके साथ जोड़ दिए जाते हैं। उस किये जा रहे कार्य की अच्छाई या उपादेयता पर ध्यान न देकर मलिन निहितार्थों को खोज-खोज कर प्रचारित करने में एक दूसरे से बाजी मार ले जाने का सिलसिला शुरू हो जाता है। जब कि होना यह चाहिए कि यदि अमुक कार्य कोई कर रहा है और वह कार्य आपकी आंख की किरकरी बन रहा है तो आप उससे भी अच्छा कार्य करके दिखाएं। **उसके कार्य सम्पन्न करने की रेखा से अपनी बड़ी रेखा खींचकर उसे छोटा बना दीजिए।** उसके कार्य में मलिन निहितार्थों का आरोप सिद्ध करने में अपनी शक्ति को व्यर्थ न करें अपितु उसे सकारात्मक कार्य में निवेशित करें। कमियाँ सबमें मिल जाएंगी। कोई भी मनुष्य पूर्ण (दोष रहित) नहीं होता, किन्तु याद रखिये **कर्मवीर की ही विजय होती है और जनता उसी को अपना सहयोग/समर्थन प्रदान करती है।**

www.thearyasamaj.org

ओ३म्

पं. राजाराम शास्त्री

पण्डित राजाराम शास्त्री जी अपने काल में अनेक शास्त्रों के अति मर्मग्य तथा इन के टीका कार के रुप में सुप्रसिद्ध विद्वान के रुप में जाने गये। आप का जन्म अखण्ड भारत के अविभाजित पंजाब क्शेत्र के गांव किला मिहां सिंह, जिला गुजरांवाला में हुआ, जो अब पाकिसतान में है। आप के पिता का नाम पं. सुबा मल था। इन्हीं सुबामल जी के सान्निध्य में ही आपने अपनी आरम्भिक शिक्शा आरम्भ की।

आप अति मेधावी थे तथा शीघ्र ही प्राथमीक शिक्शा पूर्ण की ओर छात्रव्रति प्राप्त करने का गौरव पाया किन्तु इन दिनों एक आकस्मिक घटना ने आप के मन में अंग्रेजी शिक्शा प्रणाली के प्रति घ्रणा पैदा कर दी तथा संस्क्रत के प्रति आक्रष्ट किया। यह घटना एक शिक्शित युवक को ईसाई बनाने की थी। जब आप ने देखा कि एक अंग्रेजी पढ़े लिखे नौजवान को ईसाई बनाया जा रहा है तो आप के अन्दर के धर्म ने करवट ली। आप जान गये कि यह अंग्रेजी शिक्शा प्रणाली हमारे देश व धर्म का नाश करने वाली है। इस के दूरगामी विनाश को आप की द्रष्टी ने देख लिया तथा आप ने इस शिक्शा प्रणाली के विरोध में आवाज उटाते हुए इस प्रणाली में शिक्शा पाने से इन्कार कर दिया तथा संस्क्रत के विद्यार्थी बन गए।

जब आप ने संस्क्रत पढ़ने का संकल्प लिया उन्हीं दिनों ही आप के हाथ कहीं से सत्यार्थ प्रकाश नामक ग्रन्थ आ लगा। स्वामी दयानन्द सरस्वती क्रत यह ग्रन्थ आप के लिए कान्तिकारी परिवर्तन का कारण बना तथा इस ग्रन्थ के अध्ययन मात्र से आप में संस्क्रत आदि शास्त्रों के गहनता पूर्वक अध्ययन करने की रुचि आप में उदय हुई। इस ग्रन्थ के विचारणीय प्रश्नों पर चिन्तन करने के मध्य ही आप में इस का दूरगामी प्रभाव स्पष्ट दिखाई दिया तथा आपने तत्काल व्याकरण, काव्य तथा न्याय दर्शन आदि का विधिवत ढंग से अध्ययन करना आरम्भ कर दिया। इतना ही नहीं इस काल में आपने शंकरभाष्य तथा उपनिषदों का स्वाध्याय तथा खूब लगन से अनुशीलन किया ओर फ़िर महाभाष्य पटने का निर्णय लिया। अपने इस निर्णय को कार्य रुप देते हुए आपने जम्मू की ओर प्रस्थान किया।

आपने १८८९ में अपना अध्ययन का कार्य पूर्ण किया तथा अपने घर लौट आए। यहां आ कर आप ने एक हिन्दी पाट्शाला का संचालन किया। कुछ ही समय पश्चात आपने अम्रतसर आकर आर्य समाज द्वारा संचालित एक विद्यालय में नियुक्ति पा कर अध्यापन का कार्य करते हुए वेद के सिद्धान्तों का ग्यान भी विद्यार्थियों को देना आरम्भ किया। किन्तु उत्साही व लगन शील व्यक्ति को सब लोग अपनी ओर ही खैंचने का प्रयास करते हैं। इस लगन का ही परिणाम था कि डी ए वी कालेज के प्रिन्सिपल महात्मा हंसराज जी ने इन्हें १८९२ में लाहौर बुला लिया। यहां आप को डी ए वी स्कूल में संस्क्रत अध्यापक स्वरुप नियुक्त किया गया।

विद्वान की विद्वता के लोहे को मानते हुए शास्त्री जी को १८९४ मे डी ए वी कालेज लाहौर में संस्क्रत के प्राध्यापक स्वरुप नियुक्त किया गया। कालेज ने आप की योग्यता का सदुपयोग करते हुए आप की इच्छाशक्ति का भी ध्यान रखा तथा कालेज की मात्र लगभग पांच वर्ष की सेवा के पश्चात अगस्त १८९९ में आप को साट रुपए मासिक की छात्र व्रति आरम्भ की इस छात्र व्रति से आपने काशी जा कर मीमांसा आदि दर्शनों का अध्ययन करने के लिए काशी की ओर प्रस्थान किया।

काशी रहते हुए आपने पण्डित शिवकुमार शास्त्री जी से मीमान्सा एवं वेद का अध्ययन किया। यहां ही रहते हुए आपने पण्डित सोमनाथ सोमयाजी से यग्य प्रक्रिया का बिधिवत परिचय प्राप्त करते हुए इसका अध्ययन किया। आप का काशी में अध्ययन कार्य १९०१ में समाप्त हुआ तथा इसी वर्ष आप काशी से लौट कर लाहौर आ गये ओर कालेज में फ़िर से कार्य आरम्भ कर दिया किन्तु कालेज प्रबन्ध समिति ने आप का कार्य बदल कर एक अत्यन्त ही जिम्मेदारी का कार्य सौंपा। सह कार्य था विभिन्न शास्त्रीय ग्रन्थों के भाषान्तर का। इस कार्य का भी आपने ब्वखूबी निर्वहन किया। इसके साथ ही आप ने रजा राम शस्त्री पर भाषय तथा टीका लिखने का कार्य भी आरम्भ कर दिया।

वर्ष १९०४ में शास्त्री जी ने पत्रकारिता में प्रवेश किया। आप ने अधिशाषी अभियन्ता अहिताग्नि राय शिवनाथ के सहयोग से **आर्ष ग्रंथावली** नाम से एक मासिक पत्र का प्रकाशन आरम्भ कर दिया। यह ही वह पत्र था जिसके माध्यम से आपने जो भी शास्त्र ग्रन्थों के भाष्य किये थे, उनका प्रकाशन हुआ। इस प्रकार आपके प्रकाशित भाष्यों का अब जन जन्को लाभ मिलने लगा। आर्य सामाजिक संस्थाओं मं कार्य रत रहते हुए आपने अनेक प्रकार का साहित्य भी दिया किन्तु आप के कार्यों से एसा लगता है कि आप के विचार आर्य समाज व रिषि दयानन्द के दार्शणिक सिद्धान्तों से पूरी तरह से मेल न खा सके तथा यह अन्तर बटते बटते विकराल होता चला गया।

इस सब का यह परिणाम हुआ कि १९३१ में पं. विश्वबन्धु जी के सहयोग से आर्य समाज के कई विद्वानों से शास्त्रार्थ किया। शास्त्रार्थ का विषय रहा **निरुक्त कार यास्क वेद में इतिहास मानते थे, या नहीं।** इस विषय पर पं भगवद्दत जी, पं. ब्रह्मदत जिग्यासु, पं. प्रियरत्न आर्ष, टाकुर अमर सिंह जी आदि से १८ मई से २२ मई १९३१ तक यह शास्त्रार्थ महात्मा हंसराज जी की अध्यक्शता में लाहौर में ही हुए।

इस प्रकार समाज के इस सेवक ने समाज की सेवा करते हुए १८ अगस्त १९४८ को इस संसार से सदा सदा के लिए विदा ली। आपने अपने जीवन काल में अनेक ग्रन्थ लिखे जिनमें अथर्ववेद भाष्य चार भाग (सायण शैली में), वेद व्याख्यात्मक ग्रन्थ, वेद ओर महाभारत के उपदेश, वेद ओर रामायण के उपदेश, वेद, मनु ओर गीता के उपदेश, वेदांग, दर्शन शास्त्र, उपनिषद आदि शास्त्रों तथा इतिहास व जीवन चरित हिन्दी तथा संस्कृत भाषा व्याकरण आदि सहित अनेक स्फुट विषयों पर अनेंक ग्रन्थ लिखे।

डा. अशोक आर्य
१०४, शिप्र अपार्टमेंट, कौशाम्वी,
गाजियाबाद
मोबाईल : ०९७१८५२८०६८

www.thearyasamaj.org

गोमूत्र–महौषध

गोहत्या पर अकबर बादशाह का फ़रमान–बादशाह अकबर ने अपने कार्यकाल में गोहत्या पर प्रतिबंध का फ़रमान जारी करते हुए कहा था कि अल्लाह ने आदमी को खाने के लिए बहुत–सी बेहतरीन चीज़ें दी हैं, इसलिए उसे अपने पेट को पशुओं की कब्रगाह नहीं बनाना चाहिए और न ही पशुओं को सताना चाहिए।

गोमूत्र में २४ खनिज तत्त्व (Minerals) होते हैं। यह असाध्य व लाचार, लाइलाज रोगियों के लिए महौषध है। गोमूत्र में विद्यमान ताम्र, तांबा (Copper) मानव शरीर में पहुंच कर स्वर्ण में परिवर्तित हो जाता है।

गोमूत्र से लाभ

i) ताज़ा गोमूत्र आठ बार कपड़े में छान करके सुबह खाली पेट और शाम को ५-६ बजे सेवन करने से रोगियों को निश्चित लाभ होता है।

ii) गोमूत्र असंख्य विषाक्त कीटाणुओं का नाश कर देता है।

iii) यह ज़मीन की उर्वरा शक्ति को बढ़ाता है।

iv) गोमूत्र पंचगव्य (गोदुग्ध, गोघृग्ध, गोघृत, गोदधि, गोमूत्र और गोमय-गोबर) का एक अंग है। इस का अलग से या पंचगव्य के रूप में अनेक औषधियों में प्रयोग महत्त्वपूर्ण है।

v) गुल्म, कुष्ठ, पाण्डु, कृमि और मिर्गी आदि रोगों में गोमूत्र उपयोगी है।

vi) नवयुवकों के लिए गोमूत्र, शीघ्रपतन, धातु का पतलापन, कमज़ोरी, सुस्ती, आलस्य, सिरदर्द, क्षीण स्मरण शक्ति में लाभकारी है।

vii) पंचगव्य (जिसमें गोमूत्र भी होता है) से मिरगी, दिमागी कमज़ोरी, पागलपन, भयंकर पीलिया, बवासीर आदि रोगों का इलाज होता है।

viii) कैंसर, उच्च रक्तचाप, दमा आदि रोगों में भी गोमूत्र का सेवन अत्यन्त लाभप्रद है।

ix) गोमूत्र से भूख की कमी दूर होती है और स्नायनिक रोग ठीक होते हैं।

x) **फिनाइल**– गोमूत्र से बनाया गया फिनाइल तीन प्रयोगशालाओं के टेस्ट किए जाने के उपरान्त बहुत अच्छा पाया गया।

xi) पेस्टीसाइड– आयात किए जा रहे पेस्टीसाइडस् में ३२ प्रतिबंधित हो चुके और कुछ प्रतिबंधित होने की प्रक्रिया में हैं, चूंकि वे स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त हानिकारक सिद्ध हुए हैं। इनके मुकाबिले में गोमूत्र द्वारा निर्मित पेस्टीसाइड (जिसमें तमाम वृक्षों के पत्ते तथा जड़ी-बूटियां मिलाई जाती हैं) बहुत कारगर व उपयोगी सिद्ध हुआ है।

xii) **पंचगव्य साबुन**– यह वर्तमान समय में बाज़ार में उपलब्ध साबुनों में सबसे अच्छा है। यह किसी भी प्रकार की चर्बी एवं केमिकल के प्रयोग से रहित है। स्वास्थ्य व त्वचा के रोगों के लिए भी हितकर है और मूल्य की दृष्टि से सामान्य साबुनों के बराबर है।

गोमूत्र की दवा कितनी लाभकारी !

i) भरत झुनझुनवाला के कथनानुसार–'मेरी ७५ वर्षीय माँ **हृदय रोग** से पीड़ित थीं। उनका हृदय इतना कमज़ोर था कि बाईपास सर्जरी भी नहीं हो सकती थी। उन्हें हर पंद्रहवें दिन अस्पताल में भर्ती कराना पड़ता था। फिर उन्होंने **गोमूत्र का कैपसूल** लेना प्रारम्भ किया। पिछले एक वर्ष से वे स्वस्थ हैं।'

ii) 'मेरे ससुर **गले में कैंसर** से पीड़ित थे। उनकी रेडिएशन थिरैपी, सिर दर्द, खांसी आदि। **गोमूत्र की कैपसूल** से उन्हें भी बहुत आराम हुआ।'

iii) 'इंदौर में एक भाई ने अपनी माता का इलाज **गोमूत्र** से किया। अब वे प्रतिदिन अपने धर पर **गोमूत्र चिकित्सा** करते हैं। अनेक लोग सुबह आकर गोमूत्र का सेवन करते हैं। किसी के **चमड़ी में दाग** थे जो दूर हो गए। किसी को **दौरे** पड़ते थे, जो बंद हो गए।'

–सुभाष चन्द्र गुप्ता
दिल्ली
फोन : ०११-२१५ २४३५

पंचदिवसीय योग, व्यायाम प्रशिक्षण शिविर सम्पन्न

गुरुकुल आश्रम आमसेना के तत्वावधान में छ.ग. राज्य के महासमुन्द जिल्हान्तर्गत ग्राम देवरी के शासकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय में पंचदिवसीय १० से १४ सितम्बर तक योग, व्यायाम प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया गया, जिसमें ६०० बालक-बालिकाओं को योग, आसन, प्राणायाम, जूडो, कराटे, कूम्फू, तलवारबाजी, लाठी चालन, दण्ड-बैठक, सूर्यनमस्कार, भूमिनमस्कार आदि आत्मरक्षा के गुर सिखाये गये।

इस शिविर का समापन समारोह १४ सितम्बर को माध्यमिक विद्यालय के प्रांगण में रखा गया, जिसमें प्रदेश के राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी के अध्यक्ष श्री सतीश जग्गी जी के सहित अनेक गणमान्य सज्जन तथा गुरुकुल आश्रम आमसेना के संस्थापक एवं संचालक स्वामी धर्मानन्द जी सरस्वती उपस्थित थे।

इस कार्यक्रम का संयोजन श्री भुलऊराम साहू जी ने किया और इस शिविर का संचालन डॉ. कुञ्जदेव मनीषी (अध्यक्ष, आर्यवीर दल ओड़िशा) ने किया तथा प्रशिक्षण ब्र.स्वराज शास्त्री, ब्र. कृष्णदेव शास्त्री (व्यायाम शिक्षक) ने किया। सभी विद्यार्थियों को नैतिक तथा बौद्धिक शिक्षा देने का कार्य ब्र. राकेश शास्त्री ने किया। समापन के अवसर पर आदर्श कन्या गुरुकुल की आचार्या पुष्पा जी के उद्बोधन एवं कन्या गुरुकुल के ब्रह्मचारीणियों द्वारा व्यायाम प्रदर्शन किया गया। ग्रामिणों ने इस अभूतपूर्व व्यायाम प्रदर्शन की भूरि-भूरि प्रशंसा की। इस प्रकार यह शिविर अति हर्षित वातावरण में सोल्लास सम्पन्न हुआ।

–आचार्य रणजीत 'विवित्सु'

www.thearyasamaj.org

ओ३म्

25th August' 13

Arya Samaj
Mississauga Canada

समादरणीय श्री युत...

सादर नमस्ते ।

ईश्वरकृपयात्र कुशलं तत्रापि भवतु ।

अमेरिका सभा का चार दिवसीय वार्षिकोत्सव सम्पन्न होने के बाद व्ही.सी.सी. आर्य समाज मारखम का साप्ताहिक गायत्री महायज्ञ का समारोह हुआ, जिसमें दोनों समय यज्ञ तथा प्रवचन हुवे, एक दिन १०८ कुण्डीय यज्ञ हुआ जो विशेष उपलब्धि कही जा सकती है। शेष दिनों में आर्य समाज मिसीसामा तथा अनेक परिवारों में प्रवचन, अध्यापन, शंकासमाधान आदि कार्यक्रम भी चलते रहे। यथा अवसर ध्यान आदि भी कराता रहा।

भारत से बाहर पाश्चात्य एवं पौर्व्य देशों की यात्राएं जितनी बार की, उतनी ही बार उनकी भौतिक उन्नति, समृद्धि, ऐश्वर्य और उसके कारणों पुरुषार्थ, लगन, अनुशासन, दायित्व, निर्वहन, त्याग, तपस्या, दण्डव्यवस्था, समय का परिपालन, सुप्रबन्ध, राष्ट्रहित-प्रेम, दूरदर्शिता आदि को देख-सुनकर अन्तःकरण प्रफुल्लित हो जाता है। वैदिक आध्यात्मिक सिद्धान्तों, जिनसे ये प्राय: अनभिज्ञ है, उनको छोड़ देवें, किन्तु जीवन को अत्यन्त प्रतिकूल परिस्थितियों मे भी कैसे उत्तम रीति से सुन्दर-सुव्यवस्थित जीया जाये, यह बात हमारे लिए स्तुत्य, प्रेरक तथा अनुकरणीय है।

कहने को तो हमारे पास आज उच्च स्तर का आध्यात्मिक गूढ विज्ञान है- जिनको व्यवहार में लाने से जीवन में परम शान्ति आनन्द, सन्तोष स्वतंत्रता निर्भीकता मिलती है किन्तु आज वह विज्ञान मात्र पुस्तकों में ही रखा है या मंच पर कहने व सुनने तक सीमित रहा गया है। या फिर इस विज्ञान का मुखौटा बनाकर भोली भाली जनता को भ्रमित करके एषणाओं की पूर्ति की जा रही है, निर्मल बाबा इसका ज्वलन्त उदाहरण है। राष्ट्र की राजनैतिक धार्मिक चारित्रिक, नैतिक, व्यावहारिक पतन की पराकाष्ठा की स्थितिको, सभी क्षेत्रों में कार्यरत बुद्धिजीवी न जानते हों, ऐसा नहीं है, किन्तु व्यक्तिगत धन, पद, प्रतिष्ठा से सम्बन्धित स्वार्थ, अहंकार, हठ, दुराग्रह के कारण जानते हुवे भी, निष्क्रिय बैठे हैं, बल्कि जो कुछ आदर्श सत्य, न्याय युक्त बातों को स्थापित करने केलिए प्रयास कर रहे हैं, उनकी प्रशंसा, समर्थन सहयोग करने की बात दूर रही, उनको अपना विरोधी, शत्रु मानकर येन केन प्रकारेण उन पर मिथ्या आरोप लगाकर, उनको गिराने, बदनाम करनें यहाँ तक कि उनको जेल भिजवाने और मरवाने तक का हर प्रकार से षडयंत्र करते हैं। निश्चित रुप से यह राजनैतिक स्थिति धन, सत्ता, बुद्धि, शक्ति का दुरुपयोग है, जो कालान्तर में भयंकर दुष्परिणामों को उत्पन्न करने वाली है तथा क्रान्ति को उत्पन्न करने वाली है।

'धर्मनिरपेक्षता', 'सर्वधर्मसम भाव', 'अनेकता में एकता' शब्द सुनने पढने को अच्छे लगते हैं, किन्तु सूक्ष्मता से गहराई में जाकर देखें तो पता चलेगा कि सम्पूर्ण इतिहास यह बताता है और वर्तमान में प्रत्यक्ष हम देख सकते हैं कि यह सिद्धान्त व्यवहार में पूरा कभी नहीं उतरा, न उतर रहा है। २०वी शताब्दी के विश्व इतिहास में किसी एक ही देश में सबसे भयावह, क्रूर हिंसक घटना भारतवर्ष में घटित हुई। भाई भाई कहलाने वाले, साथ रहने वाले दो भिन्न धर्मानुयायियों का प्रेम, विश्वास, श्रद्धा, सौहार्द, भाई चारा सम्बन्ध सब झूठा सिद्ध हो गया। सारे देश के एक पक्षीय समुदायोंके न चाहते हुवे भी, लाख प्रयत्न करने पर भी विभाजक को रोक न सके। लाखों परिवार बेघर बार हुए, भयंकर कतलेआम हुआ, लूट खसोट, बलात्कार हुए और लाखों विधवाएं हुई, बच्चे अनाथ हुवे, बलात धर्मपरिवर्तन किया गया, न जाने क्या क्या हुआ, पढ सुन कर शरीर में रोंगटे खडे हो जाते हैं। लाखों करोड़ों के मालिक, अगस्त ४७ में पंजाब, दिल्ली, राजस्थान आदि प्रान्तों में रोड़पति बन गये, दो रोटी के लिए हाथ पसारे, सड़कों के किनारे, गरदन नीची किये, देखे गये। दिल दहल जाता है उसे याद करके।

विभाजन के जो कारण, उस समय थे वे आज भी वैसे ही हैं। कैन्सर को जड़मूल से न नष्ट किया जाये तो फिर उभर जाता है, मूल-जड़ नहीं उखड़ती है तो फिर कीकर थोर उभर जाता है। जिन व्यक्तियोंके उद्‌गम स्थान बाहर हैं, देवी देवता, धर्मगुरू, तीर्थ स्थान, धर्मबन्धु बाहर है, जो राष्ट्रगीत, राष्ट्रभाषा, राष्ट्रध्वज, राष्ट्रसंविधान, राष्ट्रीय संस्कृति, आदर्श परम्परा सिद्धान्त के प्रति श्रद्धान्वित नहीं हैं, इन की अवमानना करते हैं, हंसी उड़ाते हैं, वे कैसे राष्ट्रप्रेमी बन सकते हैं? जो अपने मत को सर्वोच्च दर्शाने के लिए कुछ भी करने को तत्पर हैं चाहे वह आतंकवाद हो या अग्रवाद, उनसे धर्मनिरपेक्षताकी आशा हमारे राजनेता, धर्मनेता, धननेता, अभिनेता, टी.वी. नेता, रक्षा नेता आदि क्यों लगाये बैठे हैं !!!

चीन या पाकिस्तान के हमलों से हम मुकाबला करने में सक्षम हो भी जायें, किन्तु जो घर में ही जयचन्द रुपी विद्रोही बैठे हैं, वहां कौन सी सेना या पुलीस सामना करेगी? औबेसी जैसों को रोकने का क्या उपाय है? संविधान पुलीस, नेता, इन दुराग्रही, हठी, अन्याय-पक्षपात पूर्ण बातों को मनवाने के लिए मरने को तैयार हैं, कैसे रोकेंगे? या तो जैसा वे चाहते है, वैसा सहने के लिए हम तैयार हो जायें या फिर संघर्ष के लिए या फिर नये देशों की स्थापना के लिए, देश के टुकडे करने के लिए, 'नान्य पन्था विद्यते अयनाय''। हे ईश्वर हमें बुद्धि, शक्ति, साहस पराक्रम, ओज प्रदान करो, जिससे हम इस अवश्यभावी घटना का सही, सफल समाधान निकालने हेतु अभी से ही समर्थ हो जायें। शुभेच्छा: ज्ञानेश्वरार्य:

www.thearyasamaj.org

युग निर्माता महर्षि दयानन्द सरस्वती

''कोई कितना ही करे, स्वदेशी राज्य सर्वोपरि होता है'' यह उद्घोष महर्षि दयानन्द ने उस समय किया था जब भारत में अंग्रेजों का राज्य था, जब लोग वदेशी राज्य की प्रशंसा करके अपने स्वार्थों को सिद्ध करने में लगे हुए थे। महर्षि दयान्द का जब प्रादुर्भाव हुआ उस समय वैदिक संस्कृति पर चारों ओर से आक्रमण हो रहे थे। लार्ड मैकाले ने शिक्षा प्रणाली में आमूल-चूल परिवर्तन करके शिक्षित जगत् को भारतीय परम्परा, संस्कृति और इतिहास से विमुख किया। आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में वेदानुसन्धान विभाग खोलकर उसके विभागाध्यक्ष के स्थान पर प्रो. मैक्समुलर को नियुक्त किया तथा उब्बट, महीधर, सायणादि के वेदभाष्यों के आधार पर वेदों के अंग्रेजी में अनुवाद करके अंग्रेजी पठित व्यक्तियों को वेदादि शास्त्रों के यथार्थ ज्ञान से वंचित किया। ईसाई पादरियों तथा मुस्लिम मौलवियों द्वारा पुराणों को आधार बनाकर हिन्दू धर्म, हिन्दू जाति और देवीदेवताओं का मखौल उड़ाया जा रहा था और हिन्दुओं को ईसाई व मुसलमान बनाने का पुरजोर प्रयत्न किया जा रहा था। तथाकथित हिन्दू धर्म की उस समय दयनीय स्थिति बनी हुई थी। यह तो एक चूं चूं का मुरब्बा बना हुआ था। इसकी कोई न्याय संगत व्याख्या नहीं कर सकता था। कोई गंगा में डुबकी लगाने को धर्म समझता था, तो कोई पीपल के चारों ओर चक्कर लगाने को, कोई शिवजी को भांग चढ़ाकर, तो कोई भैरव देवता को शराब की बूंदों से, कोई कलकत्ता की काली माँ को रक्त सिंचित करके धर्म की ध्वजा उठा रहा था, तो कोई 'अहिंसा परमो धर्मः' कहकर मुक्ति का राग अलाप रहा था। ऐसी भयानक स्थिति के समय ऋषि दयानन्द का प्रादुर्भाव हुआ।

महर्षि दयानन्द का जन्म सन् १८२४ में टंकारा (गुजरात) में श्री कर्शन जी तिवारी के यहां हुआ। उनका नाम मूलशंकर रखा गया। १४ वर्ष की अवस्था में उन्होंने शिवरात्री का व्रत रखा। अपने पूज्य पिताजी के साथ शिव की पूजा के लिए शिव मन्दिर में गये। जब रात्रि को सब लोग सो गये, चौदह वर्षीय बालक मूलशंकर (दयानन्द सरस्वती) जागता रहा। रात्रि में कुछ चूहे आये और शिव की मूर्ति पर चढ़े हुए प्रसाद को खाने लगे। तब अपने पूज्य पिताजी को उठाकर बालक मूलशंकर (दयानन्द) ने पूछा कि क्या यही शिव है जो राक्षसों से रक्षा करता है। तब पिता ने कहा था कि बेटा सच्चा शिव तो कैलास (हिमालय) में रहता है। यह तो शिव की मूर्ति (प्रतिमा) है। यह सुनकर चौदह वर्षीय बालक मूलशंकर ने निश्चय किया था कि अब तो मैं सच्चे शिव के ही दर्शन करूंगा। सोलह वर्ष की अवस्था में मूल शंकर की बहिन की मृत्यु हुई और जब वे १९ वर्ष के थे तब उनके चाचा की मृत्यु हुई। उससे वे बहुत दुःखी हुए, क्योंकि उनके चाचा उनको बहुत प्यार करते थे। लोगों से मूल शंकर पूछने लगे कि मृत्यु क्या है ? इससे बचने का कोई उपाय है या नहीं ? किसी ने उनको मृत्यु से बचने का उपाय योगाभ्यास बताया। इस प्रकार मूल शंकर सच्चे शिव को जानने तथा योगाभ्यास करने के लिए इक्कीस वर्ष (अर्थात् १८४५) में गृहत्याग करके, सारे पारिवारिक बन्धनों को समाप्त करके सच्चे शिव की खोज तथा मृत्यु से बचने के उपाय की खोज करने चल लिये। लगभग पन्द्रह वर्ष तक इन दोनों उपायों की खोज में नर्मदा, गंगा, अलखनन्दादि नदियों के किनारे विविध तीर्थ स्थानों पर अनेक दुर्गम पर्वतीय स्थलों पर भ्रमण करते रहे तथा साधुओं-संन्यासियों और योगियों से भेंट की, योगाभ्यास सीखा। मूल शंकर से शुद्ध चैतन्य और शुद्ध चैतन्य से दयानन्द सरस्वती बने तथा सन् १८६० में मथुरा में गुरुवर विरजानन्द के पास आर्ष ग्रन्थों के अध्ययन के लिए गए। तीन वर्ष तक मथुरा में गुरु चरणों में रहकर, श्रद्धापूर्वक सेवा करते हुए वेदादि, शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त करके, गुरु दक्षिणा में अपना जीवन गुरु को भेंट करके १८६३ को गुरु से विदा ली।

१८६३-६६ तक मथुरा से आगरा व आसपास के क्षेत्र में धर्म प्रचार किया। १८६६ में अजमेर में अंग्रेज पदाधिकारी से मिले तथा गोहत्या बन्द करने के लिए आग्रह किया। १८६७ में हरिद्वार में कुम्भ के मेले में पाखण्ड खण्डिनी पताका गाड़कर जोरदार खण्डन किया। सन् १८६९ में विद्या की नगरी काशी में जाकर पण्डितों को मूर्तिपूजा पर शास्त्रार्थ के लिए ललकारा किया। पन्द्रह दिन की तैयारी के बाद काशी के माने हुए २७ दिग्गज पण्डित एक ओर थे और दूसरी ओर ऋषि दयानन्द अकेले थे। मूर्तिपूजा के विषय में महाराजा काशी नरेश की अध्यक्षता में अद्भुत शास्त्रार्थ हुआ और सभी पण्डित देव दयानन्द के तर्क और प्रमाणों का उत्तर न दे सके। शास्त्रार्थ में दयानन्द की विजय की चर्चा चारों ओर फैल गई और ऋषि दयानन्द की योग्यता से सारा देश परिचित हो गया। सन् १८७२ में ऋषि दयानन्द कलकत्ता गये। केशवचन्द्र सेन, देवेन्द्रनाथ ठाकुरादि अनेक सुधारवादी नेताओं से ऋषि की भेंट हुई। हिन्दी भाषा में प्रवचन देने का आग्रह केशवचन्द्र सेन ने किया, जिसे ऋषि ने स्वीकार कर लिया। इसके पहले स्वामी जी संस्कृत में ही प्रवचन करते थे। सन् १८७४ में राजा जयकृष्ण दास के निवेदन पर ऋषि ने 'सत्यार्थ प्रकाश' लिखा जिसे राजा जयकृष्ण दास ने छपवाया था। उसके बाद ऋषि के पूना में प्रवचन हुए। गोविन्द महादेव रानाडे (न्यायाधीश पुणे) के नेतृत्व में हाथी पर बैठाकर ऋषि दयानन्द का जुलूस निकाला, स्थान-स्थान पर ऋषि का स्वागत किया गया। सन् १८७५ में मुम्बई में आर्य समाज की स्थापना की और ''संसार का उपकार करना आर्य समाज का उद्देश्य है,'' घोषित किया। उसके पश्चात् लाहौर, मेरठ, अजमेर आदि स्थानों में आर्य समाजों की स्थापना की। अपनी उत्तराधिकारिणी 'परोपकारिणी सभा' का गठन किया अपनी वसीयत लिखी जिसमें वैदिक विधि के अनुसार अपने ' अन्त्येष्टि संस्कार' करने का भी उल्लेख किया। ३० अक्टूबर १८८३ को दीपावली के दिन अपने प्राणों का त्याग किया। सन् १८२४ से लेकर १८८३ तक केवल ५९ वर्षीय जीवन में, उसमें भी आर्य समाज की स्थापना के बाद केवल आठ वर्ष का अल्प समय मिला जिसमें ऋग्वेद (७ मण्डल ६१ सूक्त) का तथा यजुर्वेद का भाष्य हिन्दी और संस्कृत में किया। सत्यार्थ प्रकाश, संस्कार विधि, ऋग्वेदादि भाष्य भूमिकादि ४३ ग्रन्थों को लिखा। अनेक शास्त्रार्थ किये, प्रवचन दिये, हजारों मीलों की प्रचार यात्रा की। अनेक विघ्न-बाधाएं आयीं, लोगों ने ईंट व पत्थर फैंके, विष खिलाया, कुटिया में आग लगाई, जीवित विषधर सांप फेंका गया, किन्तु ऋषि कभी विचलित नहीं हुआ और अन्तिम समय तक लोगों को सत्य धर्म का उपदेश देता रहा।

ईश्वर के ब्रह्मा, विष्णु, शिवादि नामों को लेकर मनुष्य में कलह हो रहा था। भक्त समुदाय शैव-वैष्णव-शाक्त आदि सम्प्रदायों में विभक्त होकर एक दूसरे की निन्दा कर रहे थे। शिव को मानने वाले विष्णु की और विष्णु को मानने वाले शिव की निन्दा कर रहे थे। और परस्पर अपने को एक दूसरे का

www.thearyasamaj.org

नूतन निष्काम पत्रिका वर्ष-४ अंक-१० मुम्बई अक्तूबर - २०१३ पृष्ठ-१६ मूल्य- रु. १/-

आश्विन २०७० (अक्तूबर २०१३) Post Date : 25-10-2013 MH/MR/N/136/MBI/-13-15 MAHRIL 06007/31/12/2015-TC पोष्ट आफिस : सांताक्रुज़ (प.)

आर्य समाज सान्ताक्रुज मुम्बई का मुखपत्र

संपादक : संगीत आर्य

मुद्रक एवं प्रकाशक : चन्द्रपाल गुप्त द्वारा कृष्ण प्रिंटींग प्रेस, २६, मंगलदास रोड, मुंबई-२. से मुद्रित कराकर आर्य समाज भवन, वी. पी. रोड, (लिंकिंग रोड़), सान्ताक्रुज़ (प.) मुंबई-४०० ०५४. से प्रकाशित किया। दूरभाष : २६६० २८००/२६६०२०७५/२२९३१५१८

प्रति, ______

______

______

टिकट

विरोधी मानकर एक दूसरे को अपशब्द कह रहे थे। उस समय ऋषि वेदों का प्रमाण 'एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति' देकर लोगों को समझाया था परमात्मा एक है और उसके नाम अनेक हैं। जिसका विस्तृत विवेचन सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम समुल्लास में किया।

धर्म के नाम पर विविध मत, मजहब और सम्प्रदायों के द्वारा एक दूसरे के प्रति घृणा, नफरत फैलाई जा रही थी, सभी अपने मजहब को श्रेष्ठ और दूसरे के मजहब को घटिया, गन्दा (खराब) बतला रहे थे। वहां ऋषि दयानन्द ने याद दिलाया कि धर्म मनुष्यों में घृणा नहीं फैलाता अपितु एक दूसरे के साथ प्रेम से रहना सिखलाता है। धर्म बांटता नहीं, एक दूसरे को जोड़ता है, मिलाता है। ''मैं सभी के साथ मित्रतापूर्वक व्यवहार करूं,'' वेद का प्रमाण उद्धृत किया 'मित्रस्या हं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे'। धर्म का सम्बन्ध हमारे आचरण व्यवहार से है। धर्म उसी को कहते हैं कि ''जैसा अच्छा व्यवहार मैं दूसरों से अपने लिए चाहता हूं वैसा ही अच्छा व्यवहार मैं दूसरों के साथ करूं'' 'आत्मनः प्रतिकूलानि परेषांम् न समाचरेत्'।

ऋषि दयानन्द ने वेदादि शास्त्रों के प्रमाणों द्वारा स्पष्ट किया कि जन्म से सभी मनुष्य समान (बराबर) हैं, कोई भी छोटा-बड़ा, ऊंचा-नीचा नहीं है। मनुष्य जाति एक ही है, अतः किसी के भी साथ भेदभाव या छुआछूत का व्यवहार नहीं होना चाहिए। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यादि कर्म करने से वर्ण बनते हैं। जो जैसा कर्म करता है, वह उसी वर्ण का कहा जाता है। जैसे जन्म से कोई डाक्टर, वकील या इन्जीनियर नहीं होता, वैसे ही जन्म से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यादि नहीं होता है। जो जैसा कर्म करता है वह उसी वर्ण से जाना जाता है। वकील का लड़का डाक्टर या डाक्टर का लड़का वकील बन जाता है, वैसे ही ब्राह्मण का लड़का क्षत्रिय या क्षत्रिय का पुत्र ब्राह्मणोचित कर्म करने से ब्राह्मण बन जाता है अर्थात् वर्ण परिवर्तित हो जाते हैं।

ऋषि दयानन्द ने स्पष्ट किया कि ईश्वर की पूजा से तात्पर्य है ईश्वर के गुणों का चिन्तन करना और उन गुणों को अपने जीवन में धारण करना। ईश्वर के उपकारों को स्मरण करके उसके प्रति कृतज्ञता प्रकट करना। राम और कृष्ण की पूजा से तात्पर्य राम के गुणों को धारण करना, उनके आदर्शों का अनुसरण करना है। श्रीराम की जयघोष करने वालों के देश में कोई पिता पुत्र के व्यवहार से दुःखी है तो बताइये राम कीपूजा कहां हो रही है। कोई मित्र अपने मित्र को धोखा दे रहा है तो कृष्ण और सुदामा की मित्रता की चर्चा कहां फलित हो रही है। इसलिए भाई-भाई में राम और भरत जैसा प्यार हो, राम जैसी पितृभक्ति पुत्रों में हो, श्रीकृष्ण जैसी मित्रता और सच्चरित्रता कृष्ण की गाथा गाने वालों में हो, यही श्रीराम और श्रीकृष्ण की पूजा है। यह ऋषि दयानन्द ने निर्दिष्ट किया है।

वेदों में सायण, महीधर, उब्बटादि वेद भाष्यकारों ने अश्वमेध, गोमेध, नरमेधादि को लेकर वेदों में पशु हिंसा, नरबलि तथा अश्लीलता आदि का घृणित उल्लेख करके लोगों को वेदों से विमुख कर दिया था। ऋषि दयानन्द ने वेदों का यथार्थ भाष्य करके सभी आक्षेपों का उत्तर ही नहीं दिया अपितु विश्व को स्मरण कराया कि वेद समस्त ज्ञान-विज्ञान के भण्डार हैं ('सर्वज्ञानमयो हि सः'-मनु.)। मनुष्य के तृण (घास) से लकर ब्रह्म पर्यन्त समस्त विषयों का ज्ञान वेदों के अन्दर विद्यमान है। इतना ही नहीं अपितु यह भी स्पष्ट किया कि जो संसार में है वही वेदों में है, और जो वेदों में है वही संसार में है। अर्थात् यदि हम आंखों से देखते और कानों से सुनते हैं तो वेदों में भी यही वर्णन है। (भद्रं कर्णेभिः श्रृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः)। वेद में ऐसा कहीं भी वर्णन नहीं मिलेगा कि हम आंखो से सुने और कानों से देखें। इसलिये संसार की यथार्थता को जानने के लिए हमें वेदों का अध्ययन करना चाहिए क्योंकि वेद और संसार का बनाने वाला परमात्मा एक ही है।

पुराणों में लिखित कथाओं को लेकर ईसाई पादरी और मुसलमान मौलवी हिन्दू धर्म में विद्यमान पाखण्डों को लेकर हिन्दुओं का उपहास कर रहे थे। ऋषि दयानन्द ने हिन्दू धर्म में धर्म के नाम पर सभी पाखण्ड, अन्धविश्वास और मिथ्या मान्यताओं का सत्यार्थ प्रकाश के ग्यारहवें समुल्लास में खण्डन करके समस्त कूड़े करकट को समाप्त करके धर्म (वैदिक धर्म) के यथार्थ स्वरूप को स्पष्ट किया। इतना ही नहीं ईसाइयों और मुसलमानों में प्रचलित अन्धविश्वास और पाखण्ड की समीक्षा ऋषि दयायनन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के १३वें और १४वें समुल्लास में करके उनको हिन्दुओं पर आक्रमण करने की बजाय अपनी रक्षा के लिये प्रेरित किया। जो मुसलमान और ईसाई हिन्दुओं को ईसाई या मुसलमान बनाने में लगे हुए थे, अपनी समीक्षा करने में लग गये तथा जिसकी रगों में खून ठण्डा पड़ गया था ऐसी मुर्दा हिन्दू जाति अपनी रक्षा में ही नहीं अपितु प्रत्याक्रमण की स्थिति में आ गयी तथा अनेक विधर्मियों को इसने शुद्ध करके वापस हिन्दू धर्म में ही दीक्षित किया।

राष्ट्रभक्ति की भावना ऋषि दयानन्द ने भारतीयों में भरी, अपने प्रवचनों, ग्रन्थों और प्रार्थनाओं में स्वदेश, स्वभाषा (राष्ट्रभाषा हिन्दी) और स्वधर्म, स्वदेशी वस्त्र आदि का वर्णन करके स्वाधीनता संघर्ष का बिगुल बजाया जिससे श्री श्यामजी कृष्ण वर्मा, वीर सावरकर, भाई परमानन्द, सरदार भगत सिंह, रामप्रसाद बिस्मिल, लाला लाजपत राय, स्वामी श्रद्धानन्द जैसे अनेक राष्ट्रभक्त हुए जिन्होंने देश की आजादी के लिए अपने प्राणों की आहुति दे दी। इस प्रकार ऋषि दयानन्द ने वेद, ईश्वर, धर्म, मानव, जाति, राष्ट्रधर्मादि सभी विषयों का यथार्थ विवेचन करके मानव जाति पर बहुत बड़ा उपकार किया है।